فیضانِ اعلیٰ حضرت

نِعْمَتِ الْبِدْعَۃُ ھٰذِہٖ

हर बिदअत गुनाह नहीं

कुफ़्र

मुर्दे का सुनना

शिर्क

क़बर पर अज़ान

बिदअत

ग़ैरुल्लाह से मदद

तसनीफ़

सय्यिद मुहम्मद सिकन्दर वारसी

तुफ़ नजदियत ना कुफ्र ना इस्लाम सब पे हर्फ़
काफिर इधर की है, ना उधर की अधर की

हर बिदअत गुनाह नहीं

नाम किताब - **हर बिदअत गुनाह नहीं**

तस्नीफ़ - सय्यिद मुहम्मद **सिकन्दर वारसी**

अनुवाद - अज़ खुद मुसन्निफ़

कम्पोजिंग - अज़ खुद मुसन्निफ़

प्रूफरीडिंग - नूर हसन

सफ़हात - 90

कुल सुवाल - 30

कीमत - -

मिलने का पता - www.SayyidZada.com.co.in

हर सुन्नी (**बरेलवी**) शख्स/प्रेस/इदारे/तंज़ीम/ को (*बिना किसी तबदीली के*)
इस किताब को छापने/छपवाने की इजाजात **आम है**

अहले इल्मे से गुज़ारिश है की कहीं खता पाए तो इस्लाह करें,

S.No	फेहरिस्त	पेज
1	क्या रसूलुल्लाह (صلی اللہ علیہ وآلہ وسلم) का साया था	7
2	कान में अज़ान और क़ब्र में दफनाने के बाद अज़ान	9
3	बिदअत की कितनी क़िस्म है, क्या हर बिदअत गुमराही है	18
4	हम इमाम अबु हनीफ़ा को क्यों फॉलो करते है (तक़लीद)	26
5	क्या वसीलाह लेना सही है, औलिया से मदद मांगना	33
6	या अली मदद, या ग़ौस मदद, ये सब कहना कैसा	35
7	हुज़ूर (علیہ السلام) के नामे पाक पर अंगूठे चूमना	37
8	इमाम के पीछे किरअत मना है	39
9	सदल क्या होता है सदल नमाज़ में मकरूह है	41
10	रहमतुल्लिल आलमीन की पैदाइश और वफात की तारीख	44
11	मुरीद के मायने, क्या किसी का मुरीद होना ज़रूरी होता है	45
12	استوا علی العرش पर अहले सुन्नत का मोक़ूफ़ और अक़ीदह	47
13	हाथ चूमना या क़दम का बोसा लेना कैसा	50
14	जिस ने तावीज़ लटकाया उसने शिर्क किया	53
15	मुर्दे सलाम सुनते हैं, और जवाब देते है	55
16	उर्स के माने क्या हैं,	61
17	क़ुरआन के मायने खुद पढ़ सकते हैं, उसे समझ सकते हैं	62
18	हिला शरई क्या होता है, ये कहा से साबित है	64
19	नमाज़ में रफयदैन क्यों नहीं करनी चाहिए	67
20	क़ब्रो पर फूल चढ़ाना कैसा क्या सहाबा ने ऐसा क्या है	69

21	अब औरत और मर्द एक साथ नमाज़ क्यों नहीं पढ़ते	71
22	20 रकअत तरावीह कहा से साबित है	73
23	तकबीर से पहले खड़े होना चाहिए, या बीच में	73
24	मुस्लमान में 72 फ़िरक़े होंगे, उनमे से एक हक़ पर होगा,	74
25	क्या फातिहा दिलाना शिर्क है ?	76
26	क्या इसाले सवाब के लिए ज़रूरी है अच्छा पकवान	77
27	हाज़िर नाज़िर पर बेहेस और दलाइल	80
28	हम मेराज 27 रजब को क्यों मनाते है	81
29	22 तारीख को इमाम जाफर सादिक़ की नियाज़ क्यों	83
30	सय्यिदों का मर्तबा बड़ा क्यों है?	84

بسم الله الرحمن الرحيم الحمد لله ربّ العالمين
الصلوة والسلام علیک یارسول الله (أم بعد)

इब्तिदाई बातें

किताब **मसाइले शरीअत** की 4 जिल्दे मुक़म्मल होने के साथ ही उसमे हज़ारो फ़िक़्ही सुवालात के जवाबात मेहफ़ूज़ किये जा चुके थे, जो की फ़िक़्ही हनफ़ी की मज़हब पर लोगो के ज़रिये सुवाल ज़वाब का मजमुआ है, उसमे ना सिर्फ मसाइले अहनाफ दर्ज थे, बल्कि बदमज़हब फ़िरक़े जैसे देवबंदी, वहाबी वगेरा के रद्द भी दलाईले अकलिया और नकलिया से किया गया था, और साथ ही अक़ाइदे अहले सुन्नत और मसलके आलाहज़रत को भी वाज़ेह किया गया, मगर किताब ज़खीम होने की वजह से लोग उसका मुक़म्मल मुताला करते ये ज़रूरी नहीं था, लिहाज़ा ज़रूरत को महसूस करते हुए **उस किताब से रद्दे वहाबियत के सुवाल जवाब को चुन कर अलग कर लिए गया,** ताकि अवामे अहले सुन्नत के लिए एक आसान फेहम किताब तरकीब में आ सके, पेशे नज़र किताब "हर बिदअत गुनाह नहीं" उसी मसाइले शरीअत किताब से चुने गए सुवाल जवाब हैं, जिसमे आसान और सहल अंदाज़ में बदमज़हब की जानिब से किये जाने वाले कुछ खास सुवालों के जवाब नक़ल है, इसमें कुल 30 ऐसे सुवाल दर्ज है जो अक्सर बदमज़हब हमारी सुन्नी अवाम से पूछते हैं, लिहाज़ा अवाम की आसानी के लिए ताकि वो बातिल से अपने अक़ीदे को मेहफ़ूज़ कर सके और **मुस्तबाहते अहले सुन्नत की दलील सीख सके,** किताब का इंतिखाब किया गया,

किताब की ज़रूरत क्यों हुई -

इसमें शक नहीं की आज के बदमज़हब हमारी सुन्नी अवाम को बहकाने के लिए उनसे अक्सर मुस्तहब्बात पर ही बात करते है, यानि नियाज़ क्यों देते हो, क़ब्र पर अज़ान क्यों देते हो, इमाम के पीछे क़िराअत क्यों नहीं करते, गैरुल्लाह से क्यों मांगते हो, वगेरा वगेरा, और तो और ऐसा भी देखा गया गया है की, खुद घर में बच्चे अगर

अपने वालिद से नियाज़ फातिहा कूँड़ें क़ब्र पर अज़ान का सुवाल कर बैठते हैं तो **सही जवाब ना आने की वजह से उन्हें हीले बहाने बनाने पढ़ते हैं**, आज हमारी अवाम जो नियाज़, फातिहा, दरगाह को जाना वगेरा वगेरा को जाइज़ तो मानती है, **मगर खुद उन्हें मालूम नहीं होता की, इसकी असल क्या है,** लिहाज़ा वो वहाबी के जवाब ना देने की बिना पर **कभी कभी अपना अक़ीदा खो देते है**,और फिर वहाबी अपनी बातिल दलील पेश करते है जिसे इल्म ना होने की बिना पर सुन्नी हज़रात सही मान लेते है, लिहाज़ा ज़रूरत महसूस हुई की कुछ चुनिंदा सुवालात को अलग करके **एक छोटी (कम सफ़हात) किताब तैयार की जाये**, जिसमे हमारी अवाम को सीखने में आसानी भी हो और वो अपने अक़ीदे और मामूलात को मेहफ़ूज़ कर सके, लिहाज़ा मैं उम्मीद करता हूँ, **इसे हर शख्स को कम अज़ कम एक बार ज़रूर पढ़ना चाहिए,** ताकि वो अपने अक़ीदे को और मज़बूत कर सके, और अपने बच्चो को भी मामुलाते अहले सुन्नत समझा सके, और सिखा सके

कितबा की खुसूसियत -

क्यूंकि ये किताब खास सुन्नी अवाम के लिए बातिल के रद्द में तोहफा है इसिलए इसे सबसे पहले हिंदी में ट्रांसलेट लिया गया, इसमें शक नहीं अक्सर **अवाम उर्दू से वाक़िफ़ नहीं है,** और वो ज़खीम किताबे हिंदी की भी पढ़ने से परहेज़ करती है, लिहाज़ा **इसे आसान और सहल हिंदी में पेश किया गया** ताकि किताब का सही मक़सद वजूद में आ सके,

अल्लाह से दुआ है की, इसे पढ़ने वाले के हक़ में मग़फ़िरत का जरिया बनाये,

Talib e DUA e **MAGHFIRAT**

Sayyid Muhamamd Sikander Warsi

सुवाल:1 (986, जिल्द: 2)

क्या रसूलुल्लाह (صلی اللہ علیہ وآلہ وسلم) का साया था दलील के साथ जवाब दें, हमें उम्मीद है हमें जल्द हमारे सवालों के जवाब मिल जाएंगे

जवाब : بسم اللہ الرحمن الرحیم

(ख़ुत्बा) - तमाम तारीफ़ उस अल्लाह की जो नूर है ज़मीनो आसमान का, और हर साये से पाक, मगर सब उसकी रहमत के साये में और करम के उम्मीदवार, और दुरूदो सलाम हो उस मुक़द्दस हस्ती पर, जो आज भी अपना साया किये हुए है, खाकसारो पर, और उनके साये में ही आराम पाएंगे, कल तपिशे महशर में, और आल ओ असहाब पर, और खुसूसी सलाम बरेली के ताजदार पर, जो हमें सिखाते रहे, की. ..

"हम सियाकारो पे या रब तपिशे ए महशर में
साया अफगन हो तेरे प्यारे के प्यारे गेसूं "
और फरमाते हैं आलाहज़रत की...
"साये का साया ना होता है ना साया नूर का"

अल-जवाब :-

बेशक़ उस मदीने के ताजदार का साया नहीं था जैसा की .

فقد اخرج الحکیم الترمذی عن ذکوان ان رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم لم یکن یرٰی لہ ظل فی شمس ولا قمر

(हाकिम तिर्मिज़ी ने रिवायत किया- हुज़ूर का साया नज़र नहीं आता था ना धूप में ना चांदनी में)

इमाम जलालुद्दीन सुयूती (رضی اللہ عنہ) ने खसाइसे कुबरा में नक़ल किया

قال ابن سبع من خصائصہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ان ظلہ کان لایقع علی الارض وانہ کان نورا فکان اذا مشٰی فی الشمس اوالقمر لاینظر لہ ظل قال بعضھم ویشھد لہ حدیث قول صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فی دعائہ واجعلنی نورا

(इब्ने सबा ने कहा, हुज़ूर की खुसूसियत में से है की आपका साया ज़मीन पर ना पड़ता, और आप नूर महज़ थे, तो जब धूप या चांदनी में चलते, आप का साया नज़र ना आता, बाज़ उलामा ने फ़रमाया इसकी गवाह वह हदीस है, की हुज़ूर ने अपनी दुआ में कहा, "**मुझे नूर कर दे**"

और शरह शामी ने तिर्मिज़ी से इसकी हिक़मत ये नक़्ल की, कि कहीं कोई काफिर आपके साये पर पैर ना रख दे, इसमें आपकी तोहीन है"

قال عثمان رضی اللہ تعالٰی عنہ ان اللہ ماوقع ظلک علی الارض لئلایضع انسان قدمہ علی ذٰلک الظل

(हज़रत उस्मान ग़नी ने हुज़ूर से अर्ज़ की बेशक़ अल्लाह ने हुज़ूर का साया ज़मीन पर ना डाला, की कोई शख्स उस पर पाऊं ना रख दे),

अल्लामा सुलैमान जबल (رضي الله عنه) फ़ुतूहाते अहमदिया में फरमाते है:

لم یکن لہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ظل یظھر فی شمس ولا قمر:

(हुज़ूर का साया ना धूप में ज़ाहिर होता ना चांदनी में)

शरह शिफा शरीफ में है

من اسمائہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم قیل من خصائصہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم انہ اذا مشٰی فی الشمس والقمر لایظھر لہ ظل

(हुज़ूर का नाम नूर है, हुज़ूर की खसाइस में शुमार किया गया की धूप और चांदनी में चलते तो साया नज़र ना आता ना पैदा होता)

शेख अब्दुल हक़ मुहद्दिसे देहलवी (رضي الله عنه) मदारिजुन नबूवत में फरमाते हैं

ونبودمرآنحضرت را صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سایہ نہ در آفتاب ونہ در قمر

(सरकार का साया सूरज और चाँद की रौशनी में ना था)

واللہ تعالٰی اعلم بالصواب واللہ یرجع الیہ ماب

सुवाल:2 (1632 जिल्द:3)

जब इंसान पैदा होता है तो उसके कान में अज़ान दी जाती है, और जब इंतक़ाल होता है तो क़ब्र में दफनाने के बाद अज़ान दी जाती है, मुझे ये जानना है के जब पैदा होता है तो उस अज़ान की तो नमाज़ हो जाती है जनाज़े की फिर जो दफ़्नाने के बाद अज़ान देते वो क्यों है ये बता दीजिये

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

अहले सुन्नत ही में ये सुन्नत आज भी राइज है
अज़ान, ग़ैरे नमाज़ भी जा-बा-जा जाइज है

(ख़ुत्बा) क्लब ओ ज़ुबान से इक़रार है, की तमाम तारीफ और इबादत अल्लाह ता'अला के लिए, और वही इबादत के लाइक, जिसने बुलंद किया अपने नाम के साथ, अपने हबीब के नाम को हर अज़ान में, ताकि फ़र्ज़ (नमाज़) से पहले उसके हबीब को याद किया जाये, और नमाज़ को हक़ीक़ी ज़िन्दगी मिले, जिसे इमामे अहले सुन्नत ने ये फ़रमाया की,

पहले हो उनकी याद, की पाए जिला नमाज़
कहती है ये अज़ान जो पिछले पहर की है"

और बेशुमार दुरूद ओ सलाम हो , क़ब्र पर ज़िक्र करके ज़िक्र को क़ब्र पर जवाज़ करने वाले आक़ा पर और उनकी आल ओ असहाब पर

अल-जवाब :-

अज़ान और नमाज़ के ताल्लुक़ से **अक़्ले** इंसानी से एक वस्वसे शैतानी को बा-आसानी दूर करना चाहता हूँ,

ये जो सुवाल में लिखा गया है की **जब बच्चा पैदा होता है तो उसके कान में अज़ान दी जाती है और अज़ान की नमाज़ मौत के वक़्त होती है,** और ऐसा ही ख्याल बहूत से लोगों का है,

अव्वल तो मैं ये अर्ज़ कर दूँ की जो लोग समझते हैं की जनाज़े की अज़ान इसलिए नहीं होती की उसकी अज़ान कान में दे दी गई है, तो **ये ग़लत और बे-असल है,**

आप ज़रा गौर करो हमारी शरीअत में अज़ान सिर्फ नमाज़ ही के लिए नहीं बल्कि और भी कई मोक़ो पर अज़ान देने का हुक्म है और उन मोक़ो पर भी नमाज़ नहीं होती, और दूसरी बात ये की हमारी शरीअत में अज़ान केवल फ़र्ज़ नमाज़ के ही लिए होती है, जैसा की बहारे शरीअत जिल्द:1 सफह:464 पर है - "फ़राइज़ के सिवा बाकी नमाज़ों मसलन- वित्र, जनाज़ा, ईदैन,... तरावी.... चाश्त... नवाफिल.. में अज़ान नहीं"

इससे साबित हुआ की नमाज़े जनाज़ा की अज़ान नहीं होती लिहाज़ा कान में जो अज़ान दी जाती है उसकी फ़ज़ीलत अलग है, उसे नमाज़े जनाज़ा से जोड़ना ग़लत है, और फिर भी किसी को ये बात समझ नहीं आती, और वो कहता है की, नहीं हर नमाज़ के लिए अज़ान है, तो फिर इशराक, तहज्जुद, ईदैन की नमाज़ में अज़ान क्यों नहीं ?

अब एक अर्ज़ - अगर ये माना जाये की उसी अज़ान पर नमाज़े जनाज़ा होती है तो में ऐसे लोगों से पूछना चाहता हूँ की अज़ान के कितने देर बाद नमाज़ पढ़ सकते है,? क्योंकि हमारे इस्लाम में तो वक़्त के अंदर ही अज़ान दी जाये और उसी वक़्त में नमाज़ अदा कर ली जाये, और जिसने अज़ान के बाद नमाज़ ना पढ़ी और वक़्त निकल गया तो अब उस अज़ान का वक़्त ख़तम, दुसरे वक़्त के लिए दूसरी अज़ान होगी, उसी अज़ान पर नमाज़ नहीं हो सकती, कभी आपने ऐसा सुना है की **आज की ज़ोहर की अज़ान से एक हफ्ते तक नमाज़ पढ़ ले** ? अगर नहीं तो पैदाइश में की गई अज़ान की **वैलिडिटी 60 साल से ज़्यादा क्यूँ रहती है** यानि अज़ान के इतने अरसे बाद नमाज़ ? (चलो ये भी छोड़ो)

अब और एक **खास बात-** आपने सुना ही होगा की नमाज़ बालिग़ मुसलमान पर फ़र्ज़ है और उसी पर शराअ के अहकाम की पैरवी लाज़िम होती है तो में ये अर्ज़ करना चाहता हूँ की अगर आप उस अज़ान को उस बच्चे की नमाज़े जनाज़ा से जोड़ते है तो फिर बच्चे पर तो नमाज़ फ़र्ज़ ही नहीं तो उसे अज़ान दे कर क्या फायदा और उसके कान में क्यूँ कहा जाता है, **"आओ नमाज़ की तरफ"** जबकि उस पर तो नमाज़ फ़र्ज़ नहीं उसे अज़ान और नमाज़ से क्या वास्ता ?

अब असले-जवाब पर

फतावा रज़विया जिल्द: 5 सफह: 658 पर है

"बाज़ उलामा ऐ दीन ने मय्यित को क़बर में उतारने के वक़्त अज़ान कहने को सुन्नत फ़रमाया है"

हक़ ये है की क़ब्र पर अज़ान ना देने यानि अज़ान मना होने की शरीअत में कोई दलील नहीं, और **जिस काम से शरीअत मना ना फरमाये, वो काम ममनु नहीं हो सकता** किसी भी काम के जाइज़ होने के लिए इतना काफी है की शरीअत में मना नहीं, और जो इसे मना करे उसे चाहिए की वो अपना दावा शरीअत से साबित करे,

क़ब्र पर अज़ान के फायदे -

क़ुरआनो हदीस में जितने भी अज़ान के फायदे हैं वो क़ब्र पर देने से भी हासिल होते है तो अब शरीअत अज़ान का क्या हुक्म बयान करती है इस तरफ एक नज़र और अज़ान आखिर है क्या इस पर भी एक नज़र इस हदीस को **इमाम तिर्मिज़ी** ने रिवायत किया -

اذا سئل المیت من ربک ترائی لہ الشیطان فی صورت فیشیر الی نفسہ ای انا ربک ـــ فلھذا ورد سوال التثبیت لہ حین یسئل

(जब मुर्दे से सुवाल होता है की तेरा रब कौन है शैतान उस पर ज़ाहिर होता है और अपनी तरफ इशारा करता है इसलिए हुक्म आया की मय्यित के लिए

जवाब में साबित क़दम रहने की दुआ करो,)
और सहीह हदीसों से साबित है की अज़ान के वक़्त शैतान भाग जाता है
मुस्लिम शरीफ اذااذن المؤذن ادبر الشيطان ول حصاص
(जब मोअज़्ज़िन अज़ान कहता है तो शैतान पीठ फेर कर भाग जाता है)
दलील 1 - जब हदीस से ये साबित है की शैतान क़ब्र में आता है और ये यह भी साबित है की अज़ान से शैतान भाग जाता है, तो क़ब्र पर अज़ान देने से ज़रूर शैतान मुर्दे को ना बहका सकेगा

हदीस मुसनद अहमद बिन हम्बल
قال لمادفن سعد بن معاذ (زاد فی روایۃ) وسوی علیہ سبح النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم وسبح الناس معہ طویلا ثم کبر وکبرالناس ثم قالوا یارسول اللہ لم سبحت (زاد فی روایۃ) ثم کبرت قال لقد تضایق علی ھذا الرجل الصالح قبرہ حتی فرج اللہ تعالٰی عنہ
(जब सअद बिन मुअज़ (رضی اللہ عنہ) दफ़न हो चुके और क़ब्र दुरुस्त कर दी गई तो हुज़ूर देर तक "سبحان اللہ" फरमाते रहे सहाबा भी हुज़ूर के साथ कहते रहे, फिर हुज़ूर " اللہ اکبر " फरमाते रहे और सहाबा भी उनके साथ कहते रहे सहाबा ने अर्ज़ की हुज़ूर अव्वल तस्बीह और बाद में तकबीर क्यों फरमाते रहे, इरशाद फ़रमाया इस नेक मर्द पर इसकी क़ब्र तंग हुई थी, यहाँ तक की अल्लाह ने यह तकलीफ इससे दूर की और क़ब्र कुशादा फरमाई,)
दलील 2- इस हदीस से साबित हुआ की हुज़ूर ने मय्यित पर आसानी के लिए बाद दफ़न "اللہ اکبر " फ़रमाया और यही कलिमे अज़ान में भी 6 बार है तो ऐन सुन्नत हुआ, अज़ान में और कलिमे ज़्यादा हैं और कलिमे ज़्यादा होने से सुन्नत की नफ़ी नहीं होती, बल्कि और कलिमात पर अल्लाह की रहमत ही होगी, जब "اللہ اکبر " से क़ब्र कुशादा हो गई, **पूरी अज़ान का किया कहना,**

हदीसो से ये भी साबित है की नज़अ के वक़्त मुर्दों को कलिमा सिखाओ जैसा की सिहाह सित्ता में है لقنوا موتاكم لاالٰہ الاالله अपने मुर्दो को لاالٰہ الاالله सिखाओ ,

दलील 3- जो नज़अ मे है वो एक दम मुर्दा है और खुद हुज़ूर ने उसे कलिमा याद करवाने का हुक्म दिया तो क़बर मे जब यानी सुवाल पूछे जाएँगे तो अज़ान से उसे जवाब याद आएगा इसकी अस्ल भी हदीस से साबित हो गई

एक हदीस पाक मे हुज़ूर ने फरमाया: اطفؤا الحريق بالتكبير

(आग को तकबीर से बुझाओ) और फरमाया: اذا رأيتم الحريق فكبروا فانه يطفئ النار

(आग देखो तो " الله اكبر " की तकबीर से उसे बुझाओ)

मुल्ला अली अल-क़ारी मिरक़ात शरह मिश्कात मे उस हदीस के तहत (हुज़ूर देर तक तकबीर कहते रहे) फरमाते हैं:-

التكبير على هذا لاطفاء الغضب الالٰهى ولهذا اورد استحباب التكبير عندرؤية الحريق

(अब ये अल्लाहु अकबर कहना ग़ज़बे इलाही के बुझाने को है लिहाज़ा आग लगी देखो तो देर तक तकबीर मुस्तहब ठहरी)

दलील 4- क़बर पर अज़ान देने की हिकमत ये भी है की हदीस मे आया की आग लगी देखो तो **तकबीर कहो** यहाँ से ये भी साबित है की क़बरे मुस्लिम पर तकबीर कहना सुन्नत है लिहाज़ा **अज़ान भी सुन्नत हुई,**

हदीस सुनन अबू दावूद, बैहिक़ी, और हाकिम ने हज़रत उस्मान " رضي الله عنه " से रिवायत किया - كان النبى صلى الله تعالٰى عليه وسلم اذافرغ من دفن الميت وقف عليه قال استغفروا لاخيكم وسلوا له بالتثبت فانه الان يسأل

"हुज़ूर जब दफ़्ने मय्यित से फारिग होते क़बर पर फरमाया करते अपने भाई के लिए इस्तग़फ़ार करो और उसके लिए जवाबे नकिरैन मे साबित क़दम रहने की दुआ माँगो की अब इससे सुवाल होगा"

मुल्ला अली अल-क़ारी मिरक़ात शरह मिश्कात मे फरमाते है

كل دعا ذكر وكل ذكر دعا (सब दुआ ज़िक्र हैं और सभी ज़िक्र दुआ हैं)

दलील 5 - बाद दफ़न क़ब्रे मुस्लिम के पास दुआ करना सुन्नत से साबित है **अज़ान खुद दुआ है** बल्कि बेहतरीन दुआ बल्कि ज़िक्रे इलाही हर ज़िक्र दुआ है यह तो साबित हो गया की क़बर पर दुआ करना सुन्नत से साबित है और यह भी हदीस मे है की हर दुआ से पहले कुछ नेक अमल (तसबीह वग़ैरा) कर लिया जाए (इससे क़ुबूलियत की उम्मीद बड़ जाती है

मुस्लिम अबू दाऊद, तिर्मिज़ी ने एक हदीस नक़ल की:

أداب الدعاء منها تقديم عمل صالح وذكره عند الشدة

आदाबे दुआ में है की इससे पहले अमले सालेह हो, ज़िक्रे इलाही मुश्किल वक़्त में ज़रूर करना चाहिए (और अज़ान भी एक ज़िक्र बल्कि, ज़िक्रे सालेह है, जैसा की ऊपर गुज़रा)

और एक हदीस में फ़रमाया: اذا نادى المنادى فتحت ابواب السماء واستجيب الدعا

(जब अज़ान देने वाला अज़ान देता है तो आसमान के दरवाज़े खोल दिए जाते है, और दुआ क़ुबूल होती है)

दलील 6- बस ये भी साबित है की हुज़ूर ने दफ़न बाद दुआ की और हदीस खबर दे रहीं है की अज़ान के बाद दुआ क़ुबूल होती है, और दुआ से पहले कुछ नेक अमल करना चाहिए कुछ ज़िक्र, तो ज़ाहिर है दफ़न बाद अज़ान देने से दुआ करने वाले के लिए क़ुबूलियत के दरवाज़े खोल दिए जाते है, और ये की अज़ान भी ज़िक्र है और दुआ से पहले अज़ान देना यानि ज़िक्रे इलाही हुआ और ये भी क़ुबूलियत के अदब में से गुज़रा तो जो लोग बाद दफ़न क़ब्र पर अज़ान देते है फिर दुआ करते है तो गोया कितनी हदीसों पर अमल करते है और दुआ की क़ुबूलियत की उम्मीद भी क़वी हो जाती है.

अज़ान ज़िक्रे इलाही है और ज़िक्रे इलाही अज़ाब को दफा करता है,

हदीस मुसनद अहमद, बैहक़ी ने नक़ल किया, फ़रमाया हुज़ूर नें

مامن شيئ انجى من عذاب الله من ذكر الله

कोई चीज़ ज़िक्रे-इलाही से ज़्यादा अज़ाबे-इलाही से निजात देने वाली नहीं

और ख़ुशी की खबर ये है की खास अज़ान के बारे में खुद हदीस में फ़रमाया गया- اذا اذن فى قرية امنها الله من عذابه فى ذلک اليوم

जब बस्ती में अज़ान दी जाती है अल्लाह उस दिन अज़ाब से अमन दे देता है

दलील 7- बेशक़ अपने मुसलमान भाई के पास अज़ान दे कर उसकी क़ब्र बल्कि क़ब्रिस्तान से अज़ाबे इलाही को दूर करना कैसा सवाब व मय्यित के लिए नफ़ाबख्श काम है,

अज़ान ज़िक्रे मुस्तफा है और ज़िक्रे मुस्तफा रहमत नाज़िल होने का जरिया है,

नसीमुर रियाज़ में है- جعلتک ذکراً من ذکری فمن ذکرک فقدذکرنی

"मैंने तुम्हे अपनी याद में से एक याद किया, जो तुम्हारा ज़िक्र करे वो मेरा ज़िक्र करता है," और ज़िक्र करने वाले के लिए तो हुज़ूर ने फ़रमाया :

حفتهم الملئكة وغشيتهم الرحمة ونزلت عليهم السكينة

उन्हें मलाइका घेर लेते है और रहमते इलाही ढाप लेती है उन पर सकीना और चेन उतरते हैं,

ये भी हदीस से साबित है की मुर्दे को क़ब्र तंग करती है और नए घर में उसका दिल घबराता है और सख्त वहशत और घबराहट होती है और अज़ान वहशत दो दूर करती है घबराहट को दूर करती है, और क्योंकि अज़ान ज़िक्र है.

क़ुरआन में है-الابذكر الله تطمئن القلوب (सुन लो खुदा के ज़िक्र से चैन पाते है दिल)

हिलियतुल औलिया में एक हदीस नक़ल है फ़रमाया:

نزل ادم بالهند فاستوحش فنزل جبرئيل عليه الصلاة والسلام فنادى بالاذان

जब आदम (عليه السلام) को जन्नत से हिंदुस्तान में उतारा तो उन्हें घबराहट हुई तो जिब्राइल (عليه السلام) ने उतर कर अज़ान दी

दलील 8- बस ये भी साबित है की ज़िक्र से दिल चैन पाते है, और अज़ान बेहतरीन ज़िक्र है और अज़ान से घबराहट दूर होती है और वहशत खत्म होती है तो कौन अक़्ल वाला नहीं चाहेगा की वो नए घर में अपने अज़ीज़ की घबराहट को दूर करे, और कौन नहीं चाहेगा की अज़ान दे कर मुसलमान की वहशत को दूर करे, मगर वो नहीं चाहेगा जिसे शैतान, अल्लाह के ज़िक्र (अज़ान) से रोके (क्या ही अच्छी मिसाल)

जो मुसलमान अपने या किसी मोमिन भाई की क़ब्र पर अज़ान देता है और उसके अज़ाब को दफा करने में मदद करता है और उसे क़ब्र में फायदा पहुंचाता है तो सुन लो उसके लिए हदीसें क्या कहती हैं: सहीह मुस्लिम में है

الله فی عون العبد ماکان العبد فی عون اخیہ

अल्लाह बंदे की मदद में है जब तक बंदा अपने भाई मुसलमानो की मदद में है

(سبحان الله क्या ही अच्छी मदद, मददे इलाही)

और इस हदीस को बुखारी ने नक़ल किया फरमाते है मदनी ताजदार:

من کان فی حاجۃ اخیہ کان الله فی حاجتہ ومن فرج عن مسلم کربۃ فرج الله عنہ بھاکربۃ من کرب یوم القیٰمۃ

(जो अपने भाई मुसलमान के काम मे हो अल्लाह उसकी हाजत रवाई फरमाता है और जो किसी मुसलमान की तकलीफ दूर करे अल्लाह उसके बदले कियामत की मुसीबतों से एक मुसीबत उस पर से दूर फरमाएगा)

जब हज़रत अली(رضي الله عنه) को हुज़ूर(عليه السلام) ने ग़मज़दा देखा फ़रमाया:

قال رأنی النبی صلی الله تعالیٰ علیہ وسلم حزینا فقال یاابن ابی طالب انی اراک حزینا فمربعض اھلک یؤذن فی اذنک فانہ درء الھمّ

मुझे हुज़ूर ने ग़मगीन देखा तो फ़रमाया ऐ अली में तुझे ग़मगीन पाता हूँ अपने किसी घर वाले से कह, की तेरे कान में अज़ान कहे, **अज़ान ग़म और परेशानी को दफा करती है)**

इमाम तबरानी ने एक हदीस नक़ल की फ़रमाया हुज़ूर (عليه السلام) ने :

ان احب الاعمال الى الله تعالىٰ بعد الفرائض ادخال السرور على المسلم

(बेशक़ अल्लाह के नज़दीक फ़र्ज़ों के बाद सब आमाल से बेहतर मुसलमान भाई को खुश करना है)

दलील 9 - "लो वो आया मेरा हामी मेरा ग़मख़्वारे उम्म" तो देख लो ऐ सुन्नी मुसलमानो तुम्हारे लिए कैसा हसीन मौका है की क़ब्र पर अज़ान देकर अपने मुसलमान भाई को फायदा पहुचाओ और जो ऐसा करे अल्लाह उसकी हाजत पूरी करता है और ये भी साबित हुआ की मुसलमान भाई को जिस तरह हो सके फायदा पहुँचाना चाहिए, मगर सोचो क्या तुम्हारा मुर्दा मरने के बाद मुसलमान नहीं ? अगर है तो अज़ान दे कर फायदा पहुचाओ, और क्योंकि वहाबी दुनिया में भी काफिर है लिहाज़ा उसका मुर्दा भी काफिर है मुर्दा काफिर को फायदा पहुचाने की हदीस हमने नहीं पढ़ी, बल्कि उसके लिए दुआ मग़फ़िरत भी कुफ्र है, तो बस ए मुसलमानो जिसके घर से कोई मुसलमान फोत हो तो उसके क़ब्र पर अज़ान दे कर फायदा पहुचाये

क़ब्र पर अज़ान देने की जो दलील ऊपर गुज़री उनका खुलासा ये है

* शैतान के शर से पनाह
* अज़ान तकबीर है और तकबीर आग से अमन
* जवाबे क़ब्र में आसानी
* ज़िक्रे अज़ान से अज़ाबे क़ब्र का दूर होना
* अज़ान ज़िक्र है और ज़िक्र हर वक़्त जायज़ है
* क़ब्र पर ज़िक्र करना सुन्नत मतलब अज़ान भी सुन्नत
* अज़ान ज़िक्र है और ज़िक्र से दिल चैन पाता है
* अज़ान में ज़िक्रे मुस्तफा यानि रहमत उतरने का ज़रीआ

* अज़ान से वहशत को दूर करना

* अज़ान के ज़रिये रंज ओ ग़म को दूर करना

* कब्र पर दुआ सुन्नत और अज़ान ज़िक्र है हर ज़िक्र दुआ यानि अज़ान सुन्नत

* क़ब्र के पास तकबीर कहना सुन्नत अज़ान में तकबीर है, अज़ान सुन्नत

* मय्यित से शैतान को दूर भगाना, इत्तिबा ए सुन्नत

* अज़ान से मोमिन को फायदा पहुचाना हदीस पर अमल

अब जो इतने फायदे हाथ आने की नियत से अपने मोमिन भाई की क़ब्र पर अज़ान दे तो कैसे सवाब के ख़ज़ाने हाथ आएंगे, हदीस में फ़रमाया:

نية المومن خير من عمله (मुसलमान की नियत उसके अमल से बेहतर है)

और जो इल्मे नियत जानता है यानि हर काम से अच्छी अच्छी नियत करना जानता है तो वो हर हर काम में बहुत सवाब कमा सकता है तो क़ब्र पर अज़ान भी अच्छी नियत के साथ दी जाये जो ऊपर गुज़री, हदीसों पर भी अमल होगा और जब तक अज़ान देगा, खुद अज़ान देने वाले पर और क़ब्र पर भी रहमते इलाही नाज़िल होती रहेगी, ज़रूर देने वाले की भी मग़फ़िरत हो जाये (अल्लाह ही देता है अक़्ल कलामइल्म ओ हिकमत के करने की)

والله تعالیٰ اعلم بالصواب والله یرجع الیه ماب

सुवाल:3 (2142 जिल्द: 4)

अस्सलामु अलैकुम, हुज़ूर कुछ लोग जुमुआ मुबारक और बहुत सी बातो को बिदअत कह कर ना करने को कहते हैं, और कहते है की हदीसे पाक में है की हर बिदअत गुमराही है और जहन्नम में ले जाने वाला अमल, तो हज़रत बिदअत की ता'रीफ और उस के अक़्साम की तफ्सीली मालूमात इरशाद फरमाये, और क्या वाक़ई में हर बिदअत गुमराही है, हज़रत क़ुरआन ओ हदीस की रौशनी में रहनुमाई फरमाये करम नवाज़िश होगी

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

(खुत्बा) - तमाम तारीफ उसी रब की जो खुदा है इमामे आज़म का जिसने उलामा को अक़्ले-सलीम दी की दीन में नए रास्ते पैदा करें ताकि क़ौम को आसानी हो और दुरूद ओ सलाम हो उस हस्ती पर जिसने सवाब की बशारत दी उनको जिन्होंने दीन में बिदअत पैदा की और आल ओ असहाब पर

अल-जवाब

बिदअत की तारीफ फ़क़त इतनी है की - **"हुज़ूर के ज़ाहिरी विसाल के बाद दीन में जो कोई नई बात निकाल दी गई हो वो बिदअत है"**

इसी तरह **मुल्ला अली अल-कारी** (رضي الله عنه) ने मिरक़ात में फरमाया -

"बिदअत के लुग़वी म'अना हैं, नई चीज़, और शरई तोर पर हर वह नई चीज़ जो हुज़ूर के ज़माने के बाद ईजाद हुई बिदअत है"

अशअतुल लम'आत शरह मिश्कात जिल्द:1 सफह:135 पर है

"ज़माना ए नबवी की क़ैद लगाई गई है - क्योंकि ख़ुलाफ़ा ए राशिदीन के पाकीज़ा दौर में ईजाद शुदा नया काम को भी **बिदअत कहा जायेगा,** मगर दर हक़ीक़त ये नए काम भी सुन्नत में दाखिल हैं" हदीस में फ़रमाया - तुम पर मेरी और मेरे ख़ुलाफ़ा ए राशिदीन की सुन्नत लाज़िम है "

अब जो **हदीस** में आया की-

فَاِنَّ خَيْرَالْحَدِيْثِ كِتَابُ اللهِ وَخَيْرَالْهَدْى هَدْىُ مُحَمَّدٍ(صلى الله تعالىٰ عليه وآله وسلم) واِنَّ شَرَّالْاُمُوْرِ مُحْدَثَاتُهَا وَكُلُّ بِدْعَةٍ ضَلَالَةٌ

(बेशक़ बेहतर कलाम अल्लाह की किताब है, और बेहतरीन रास्ता मुहम्मद (صلى الله عليه وآله وسلم) का रास्ता है और बदतरीन काम नया काम है और हर बिदअत गुमराही है)

अब रहा ये की बिदअत की कितनी क़िस्म है तो अवाम में वैसे दो मशहूर हैं

1- बिदअते हसना - दीन में वह नई बात जो ना क़ुरआन हदीस के खिलाफ हो और ना सुन्नत को मिटाने वाली हो

2- बिदअते स'इया - दीन में वह नया काम जो इस्लाम के खिलाफ हो या सुन्नत को मिटाने वाला हो

मगर बिदअत की 5 क़िस्म हैं -

1- बिदअते वाजिब - जिस पर अमल करना ज़रूरी है जैसे क़ुरआन को सीखने सिखाने के लिए इल्मे नहव का सीखना, फ़िक़्ह और हदीस को सीखने के लिए उसूले फ़िक़्ह ओ हदीस पढ़ना ।

खुलासा- हुज़ूर के बाद दीन में कई ऐसे ज़रूरी काम किये गए, जो नए हैं यानि हुज़ूर के वक़्त में ना थे अब हैं, और उनका होना इस्लाम में लाज़िम ही है, जैसे क़ुरआन में ज़ेर, ज़बर, लगाना- अब आप ही सोचो बिदअत के फतवे देने वाले वहाबी जो क़ुरआन आज हिंदुस्तान में पढ़ रहे है, सारे ज़ेर ज़बर, पेश, के साथ है, क्योंकि अब अगर क़ुरआन से ज़ेर, ज़बर, पेश निकाल दिया जाये तो हर मुसलमान क़ुरआन को सही पढ़ नहीं सकता, लिहाज़ा **ये नई बिदअत वाजिब हुई** और अब कियामत तक क़ुरआन इसी हाल में रहेगा की ना ज़बर कम होगा ना बढेगा,

2 - बिदअते मोहर्रमा- जिस पर अमल करना हराम है गुनाह है

खुलासा - यानि दीन में कोई नई ऐसी बात पैदा करना जिससे वाजिब छूट जाये, यानि वाजिब को मिटाने वाला काम,

3- बिदअते मुस्तहब्बा- जिन पर अमल करना सवाब है और छोड़ना गुनाह नहीं, जैसे दीनी मदरसों और मुसाफिर खानों की तामीर

खुलासा- वह काम जिसे मुसलमान सवाब जाने और नेक नियत से सवाब की नियत से करें, जैसे महफिले मीलाद यानि हुज़ूर के वक़्त में ना थी अब है, जाइज़ है कि किसी सुन्नत को मिटाती है ना किसी वाजिब के खिलाफ

4- बिदअते मकरूह- वह काम जिस पर अमल से कोई सुन्नत छूट जाये,

खुलासा- जैसे मस्जिदों और क़ुरआन की जिल्दों को नक़्शो निगार से मुज़य्यन

करना **(और ये कराहत शवाफे के नज़दीक है, हमारे नज़दीक मुस्तहब है)** यानि मस्जिद की दीवार और क़ुरआन की जिल्द पर नक़्श हुज़ूर के वक़्त में नहीं थे, अब हैं, और ये दीन में नया काम है,

5 - बिदअते मुबाह- वह नए काम जिसे करना सवाब ना हो और ना करना कुछ गुनाह हो,

खुलासा- जैसे आज के दौर में कई क़िस्म के खाने खाना फज्र असर की नमाज़ के बाद मुसाफह करना बिरयानी खाना, वगेरा ये सब भी बिदअत ही है.

वहाबी अपने फतवे की ज़द में

अब देखो इन नमक हरामो को कहते हैं, हर नया काम गुमराही है, बिदअत है, ख़तम होना चाहिए जबकि खुद इनका अमल 1000 बिदअत पर होते हैं,

ख़तम कर देना चाहिए

* वहाबी पढाई के लिए मदरसे खोलते है हुज़ूर के वक़्त में नहीं थे वहाबी के मदरसे बिदअत हैं,

* वहाबी मुफ़्ती बनने के लिए न्हव, सर्फ़, जैसी किताबे सीखते है, हुज़ूर के वक़्त में ऐसा कुछ नहीं था.

* वहाबी अपनी शादीओ में 10 रंग के खाने पकवाते हैं, अक्सर खाने बिदअत हैं, की हुज़ूर के ज़माने में बिरयानी खाना साबित नहीं, लिहाज़ा बिरयानी बिदअत है मगर फ्री की मिल जाये तो खा लेते है नियाज़ की मिल जाये तो बिदअत याद आती है

* वहाबी दो वक़्त खाना खाता है जबकि हुज़ूर से एक वक़्त का खाना सुन्नत है और दो वक़्त का खाना और पेट भर के खाना बिदअत है खुद **हज़रत आइशा** ने फ़रमाया- **दीन में पहली बिदअत पेट भर के खाना हुई**, इससे मालूम हुआ

की खुद वहाबी दो वक़्त में पेट भर भर के खा कर, नई नई चीज़े खा कर बिदअत पर अमल कर रहा है -

* वहाबी आज हिंदी उर्दू बोलता है हुज़ूर ने कभी अरबी के सिवा कुछ ना बोला लिहाज़ा जो काम हुज़ूर से साबित नहीं या उनके वक़्त में नहीं तो हराम है लिहाज़ा वहाबी उर्दू बोल कर खुद बिदअती साबित हो रहा है

* वहाबी की मस्जिद में भी मीनार होती है, टाइल्स भी होती है जबकि दीन में नई बिदअत हुज़ूर के वक़्त में नहीं थी बाद में पैदा हुई, इसी तरह इनकी मस्जिद में A/C का लगवाना बिदअत है

* वहाबी आज हवाई जहाज़ का इस्तिमाल हज पर जाने के लिए करता है, और वो भी काफिर का बनाया जहाज़ जबकि हुज़ूर के सफर ऊंठ वगेरा पर साबित है, वरना सफर पैदल भी, तो वहाबी भी ऊँठ पर बैठ कर हज पर क्यों नहीं जाता, फिर फ़ोन, कंप्यूटर से दीन फैलाना भी बिदअत है, हुज़ूर ने कभी दीन इन्टरनेट से नहीं फेलाया फिर ये नई बिदअत पर अमल करके खुद जहन्नम का कुत्ता साबित हो रहा है या नहीं ?

जितना लिखा जाये कम है, अगर बिदअत के वही मअना लिए जाये जो वहाबी लेता है की **"हर बिदअत गुमराही है"** तो निज़ामे दुन्या थम जाये

इमाम शाफ़ई (رضي الله عنه) फरमाते हैं-

वह नई चीज़ जो क़ुरआन ओ हदीस अक़वाल ओ अफ़वाले सहाबा या इज्मा ए उम्मत के मुखालिफ हो, वह गुमराही है और जो अच्छी अच्छी नई चीज़े इनमे से किसी के मुखालिफ ना हो वह गुमराही नहीं.

देखें हाशिया मिश्कात जिल्द:1 सफह:27, इसी तरह हज़रते उमर फ़ारूके आज़म ने तरावीह की नमाज़ जमाअत के साथ की और फ़रमाया –

(رضي الله عنه) अब्दुलाह बिन मसऊद (यह अच्छी बिदअत है) نِعْمَتِ الْبِدْعَةُ هٰذِهٖ

से मरवी- رَاٰهُ الْمُسْلِمُوْنَ حَسَنًا فَهُوَ عِنْدَ اللّٰهِ حَسَنٌ ا

(तमाम मुसलमान जिस चीज़ को अच्छा मान लें वह अल्लाह के नज़दीक भी अच्छी है,) क्योंकि हदीस में हुज़ूर ने फ़रमाया - لَا يَجْتَمِعُ اُمَّتِىْ عَلَى الضَّلَالَةِ

(मेरी उम्मत गुमराही पर जमा नहीं होगी)

मिरातुल मफ़ातीह शरह मिशकातुल मसाबीह जिल्द:1 सफह:414 पर लिखते हैं, - قُيِّدَ الْبِدْعَةُ بِالضَّلَالَةِ لِاِخْرَاجِ الْبِدْعَةِ الْحَسَنَةِ

(बिदअते दलालती की क़ैद इस हदीस में इसलिए लगाई गई ताकि बिदअते हसना को इससे निकाल दें, क्योंकि बिदअते हसना गुनाह नहीं)

मिश्कात जिल्द:1 सफह:33 पर हुज़ूर का फरमाने आलीशान है-

مَنْ سَنَّ فِى الْاِسْلَامِ سُنَّةً حَسَنَةً فَلَهٗ اَجْرُهَا وَاَجْرُ مَنْ عَمِلَ بِهَا مِنْ بَعْدِهٖ مِنْ غَيْرِ اَنْ يَّنْقُصَ مِنْ اُجُوْرِهِمْ شَىْءٌ وَمَنْ سَنَّ فِى الْاِ سْلَامِ سُنَّةً سَيِّئَةً كَانَ عَلَيْهِ وِزْرُهَا وَوِزْرُ مَنْ عَمِلَ بِهَا مِنْ بَعْدِهٖ مِنْ غَيْرِ اَنْ يَّنْقُصَ مِنْ اَوْزَارِهِمْ شَىْءٌ

(जो इस्लाम में कोई अच्छा तरीक़ा निकाले तो उसके लिए सवाब है और जो लोग उसके बाद उस अच्छे तरीके पर अमल करेंगे, उनके सवाबो का अज्र भी उसको मिलेगा, बगैर इसके के उन लोगों के सवाबो में कोई कमी हो. जो इस्लाम में कोई बुरा तरीक़ा निकाले तो उस पर उसका गुनाह है, और तमाम उन लोगो के गुनाहों का वबाल भी इस पर होगा जो इसके बाद इस बुरे तरीके पर अमल करेंगे, बगैर इसके के उन लोगों के गुनाह में कोई कमी हो)

खुलासा ए कलाम-

इन दलाइल से ये साबित हुआ की जो हदीस में है की “ كل بدعة ضلالة ” को न

यानि हर **बिदअत गुमराही है-** इससे मुराद दीन में वे नया काम है **जो क़ुरआन हदीस के खिलाफ या सुन्नत को मिटाने वाला हो**, मगर वहाबी जो आधी हदीस पेश करते है या नई बातें दीन में पैदा करते हैं, इसके बारे में खुद हुज़ूर ने फ़रमाया- مالم تسمعوا انتم ولاآباؤكم (जो तुमने और तुम्हारे बाप दादा ने कभी ना सुनी)

ये तो हुआ बिदअत पर मुख़्तसर कलाम अब असले सुवाल की जानिब -
कहा गया - **जुमुआ मुबारक कहना बिदअत है?**
अगर मान भी लिया जाये की ये बिदअत है, तो सुवाल ये है की कौन सी बिदअत है, क्योंकि वहाबी बस बिदअत का एक ही मअना जानता है, और वो भी गुमराही, जैसे खुद गुमराह है इसी तरह-
अगर किसी ने किसी मुसलमान को जुमुआ मुबारक कह दिया, तो **इसमें कौन सा गुनाह हुआ,** कौन सी बात क़ुरआन हदीस के खिलाफ हुई, कौन सा वाजिब तर्क हुआ, क्या सुन्नत छूट गई, कौन सा काम सुन्नत के खिलाफ हो गया,
मैं कहता हूँ (अल्लाह ही की तौफ़ीक़ से) की किसी मुसलमान को जुमुआ की मुबारकबाद देना ना सिर्फ बिदअत बल्कि क़ुरआन ओ हदीस पर अमल है सवाब का काम है देखें क़ुरआन में अल्लाह अपनी नेअमत याद दिलाता है, और नेअमत पर शुक्र को कहता है, लिहाज़ा जिस मुसलमान के लिए जुमुआ नेअमत है वो अल्लाह का शुक्र अदा करता है जिसे ये दिन नसीब हुआ की जुमुआ आम दिनों का सरदार है इसमें हर नेक आमाल पर सवाब आम दिनों के मुक़ाबले में ज़्यादा दिया जाता है - खुद क़ुरआन में अल्लाह की नेअमतों के बारे में है- وَ اِنْ تَعُدُّوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ **(और अगर तुम अल्लाह की नेअमते गिनों)**
(यानि अल्लाह की नेअमत बहुत है जुमुआ भी उम्मत के लिए एक नेअमत है)

जब कोई किसी को जुमुआ मुबारक कहता है ज़ाहिर है की वो सलाम भी करता होगा, **लिहाज़ा सलाम करने की सुन्नत पर अमल** इस मुबारकबाद से हो गया, अगर ये मुबारकबाद देने वाला आपके सामने है, तो ज़रूर मुबारकबाद मुस्कुरा कर कही जायेगीं, ना की दुश्मनी में, तो **मुस्कुराने की सुन्नत पर भी अमल** हो गया ऐन मुमकिन है की दोनों एक दुसरे से मुसाफह भी कर लें, **तो मुसाफह की सुन्नत भी** अदा हो जाएगी, और हमने बाद जुमुआ मुबारकबाद दे कर गले मिलते हुए भी मुसलमानो को देखा है तो **ख़ुशी में गले मिलना सुन्नत है** लिहाज़ा ये सुन्नत पर भी अमल होगा, हदीस में फ़रमाया - **मुसलमान का दिल खुश करना बेहतरीन सदक़ा है-** अब देखें जब कोई किसी को मुबारकबाद देता है तो उसके चेहरे पर ख़ुशी आती है जो दिल के खुश होने की अलामत है लिहाज़ा मुसलमान को खुश करना सदक़ा हुआ- इसी तरह इस हदीस पर भी अमल हुआ, फिर बाज़ लोग आखिर में दुआ (**जज़ाकल्लाह**) कह देते है, इस पर क़ुरआन पर भी अमल हुआ की **अल्लाह दुआ मांगने वालो को पसंद करता है-** और जो जुमुआ को अपने लिए नेअमत ना जाने उसके लिए क़ुरआन में है- يَعْرِفُوْنَ نِعْمَتَ اللّٰهِ ثُمَّ يُنْكِرُوْنَهَا (अल्लाह की नेअमत पहचानते है फिर उसके मुनकिर होते हैं)

लिहाज़ा मुसलमान के साथ दुआ, सलाम, ख़ुशी और नेअमत का इज़हार करते हुए जुमुआ मुबारक कहना दुरुस्त है, फ़रमाया बरेली के इमाम ने-
इन वहाबियो के बारे में जिन्हें हर काम हराम दिखता है - कहते है,

तुफ़ नजदियत ना कुफ्र ना इस्लाम सब पे हर्फ़
काफिर इधर की है, ना उधर की अधर की है

واللہ اعلم ورسولہ اعلم، عزوجل وصلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم

सुवाल:4 (1525 जिल्द:3)

4 इमाम हैं, लेकिन हम हनफ़ी क्यों है, इमाम अबु हनीफ़ा को ही क्यों फॉलो करते है हम सब और उनका बताया गया तरीक़ा क्यों? जब के कई सहाबा के क़ौल से और हदीसों से भी हम हर तरीका इख़्तियार कर सकते है, ग़ैर मुक़ल्लिद कहते हैं वो किसी इमाम को नहीं मानते और उनके इमाम रसूलुल्लाह (صلی اللہ علیہ وآلہ وسلم) हैं, तो इसके मुताल्लिक़ आप क्या कहते है, ? I am also hanafi, मुफ़्ती सहाब जवाब इनायत फरमाएं.

जवाब : بسم اللہ الرحمن الرحیم

इमाम की तक़लीद करना ही हमारे लिए सवाब है

वहाबी के हज़ारो सुवाल का ये एक वाहिद जवाब है

अक्सर देखा गया है की वहाबी हमारी सीधी-साधी अवाम से चंद सुवाल ज़्यादा करती है फिर इन वहाबी की बेवक़ूफ़ी तो देखो की अवाम से पूछती है, **कभी आलिम से पूछते ही नहीं,** गोया अवाम कोई मुफ़्ती हो? इससे इनके कम इल्मी का पता चलता है फिर अवाम तो अवाम है उसे क़ुरआन हदीस से कोई दलील कहाँ दे मिलेगी, और उलमा ने अपनी किताबों में क़ुरआन हदीस की दलील पेश की और बाज़ ने दलाइल ए अक़लिया भी दी, मगर सीधी अवाम उसे समझ नहीं पाती तो ज़रूरत महसूस होने लगी की इसका जवाब ऐसा दिया जाये की दोबारा इस मसअले पर कलाम करने की हाजत ना रहे, लिहाज़ा हम इसका जवाब दो फसल में देंगे, **जवाब 1 में** (जवाबे आवाम) इस जवाब में हम आसान तरीके से सुन्नी अवाम को तक़लीद का जवाब बताएँगे ताकि वो वहाबी को जवाब दे, जो की **एक ख्याली मुनाज़रे** की शक्ल में होगा **जवाब 2** (जवाब खास) क़ुरआन से और क़ुतुब से तक़लीद की दलील, पहले

जवाबे आम पेश किया जाता है,

वो भी मसालेदार, तेज़ नमक दे साथ

वो कहते थे ना बरेली के **अहमद रज़ा** की...

दिले दुश्मन को रज़ा तेज़ नमक की धुन्न है

जवाबे आवाम फि तक़लीदे इमाम-

क्योंकि हिन्दुतान में अक्सर मुसलमान सुन्नी हनफ़ी है इसका मतलब होता है की हम इमामे आज़म अबू हनीफा की तक़लीद करते हैं, शरई इस्तिलाह में **"तक़लीद ये है कि"** – "किसी के क़ौल, फैल को अपने लिए हुज्जत मान लेना और शरई एतबार से खुद पर लाज़िम जानना, क्योंकि मुजतहिद की क़ुरआन ओ हदीस में गहरी नज़र होती है"

एतराज़ किया जाता है- की जब क़ुरआन, हदीस मौजूद है तो तक़लीद करना हराम और शिर्क है.

जवाब दिया जाता है- कि क़ुरआन हदीस से हुक्म निकालना हर एक के बस की बात नहीं, लिहाज़ा ऐसे शख्स की बात मान ली जाये जो क़ुरआन हदीस का ज़्यादा इल्म रखता है, क्योंकि क़ुरआन की हर आयत का अगर वही मतलब निकाल लिए जाये जो ज़ाहिर है तो बाज़ सूरतों में कुफ्र हो जाता है, क्योंकि क़ुरआन में तो **"अल्लाह का चेहरा" "अल्लाह का हाथ"** मौजूद है इसी तरह हदीस में **"अल्लाह का हँसना"** भी मौजूद है तो हर शख्स इसका सही मतलब और मफ़हूम नहीं निकाल सकता लिहाज़ा किसी बड़े इमाम की बात मान ली जाये क्योंकि क़ुरआन में इनकी गहरी नज़र होती है,

वहाबी से पूछा गया **"क्या आपके घर में सभी लोग क़ुरआन ओ हदीस से खुद**

मसअले निकाल लेते हैं”

वहाबी बोला- नहीं हम अपनी मस्जिद के इमाम से पूछ लेते हैं,

मैंने कहा- **यही तो तक़लीद है** की खुद नहीं देखते इमाम से पूछते हो,

वहाबी बोला- हमारा इमाम क़ुरआन ओ हदीस से बताता है इसलिए उसकी मानते हैं,

मैंने कहा - इमामे आज़म साइंस की किताब से नहीं बताते वो भी क़ुरआन ओ हदीस से बताते है फिर?

वहाबी बोला- मगर किसी की बात को बेदलील मान लेना जाइज़ नहीं

मैंने कहा – जब तू अपने इमाम से कोई बात पूछता है और उसका जवाब आने पर मान लेता है या बुखारी खरीद कर उसमे खुद चेक करता है की सही बताया या नहीं,

वहाबी बोला- जो इमाम कहता है मान लेते हैं बुखारी में खुद नहीं तलाशते

मैंने कहा - यही तो तक़लीद है की जो इमाम कहे, मान लो खुद तलाश ना करो क्योंकि इमाम क़ुरआन हदीस से ही बताता है

वहाबी बोला- हर चीज़ क़ुरआन हदीस से लेते है, इमाम की बात नहीं मानते

मैंने कहा - जब सब हुक्म क़ुरआन हदीस में है तो घर में क़ुरआन हदीस खरीद लो इमाम के पास जा कर काफिर क्यों बनते हो खुद क्यों नहीं देख लेते,

वहाबी बोला- हर शख्स को क़ुरआन हदीस में इतनी आसानी से मसाइल नहीं मिलते इसलिए इमाम की मदद लेते हैं,

मैंने कहा – **यही तो तक़लीद है** की इमाम की मदद ले ले हर शख्स आलिम नहीं ना खुद मसअला निकाल सकता है,

फिर मैंने कहा, ऐ वहाबी इमाम से तू पूछे, इमाम पर यकीन तू करे, किताब

चेक तू ना करे, इमाम की बात बे-देखे मान जाये, फिर भी तू मुशरिक नहीं होता **जबकि ये सारी बाते ही तो तक़लीद है**, हक़ तो जब था की तेरी खबीस क़ोम को चाहिए था की जो मसअला पेश आये खुद बुखारी में ढूंढे, बच्चा हो या औरत खुद क़ुरआन से मसअला निकाल ले, किसी इमाम पर भरोसा क्यों करे, **(और बुखारी की किताब को मान लेना भी तो इमाम बुखारी की तक़लीद हुई)** किसी इमाम से ना पूछे ना उसकी माने, जब ही तू ग़ैर मुक़ल्लिद होगा, वरना तू भी अपने इमाम का मुक़ल्लिद हो जायेगा, और मुशरिक भी.

सुन्नी मुसलमान को जान लेना चाहिए की आपको **इमामे आज़म की तक़लीद (या किसी भी इमाम की) वाजिब है, और आलिम से मसअला पूछना फ़र्ज़,** जब आप पर नमाज़ फ़र्ज़ हुई आपने उसका इल्म सीख़ लिया, फिर रोज़े फ़र्ज़ हुए तो उसका इल्म सीखा, और जब आप पर ज़कात फ़र्ज़ हुई तो उसका, ठीक वैसे ही हराम हलाल का और ज़रूरियाते दीन का इल्म आपने सीख लिया , अब **रहा इल्मे मुनाज़रा** यानि किसी बदमज़हब से बेहेस करके अपनी बात को साबित करना, और ये **इल्म हर मुसलमान पर फ़र्ज़ नहीं**, जब क़ुरआन कहता है की शैतान की बात ना सुनो तो आप वहाबी से सुनते ही क्यों हो की हुज़ूर ने क्या किया, क्या नहीं किया, **क्या आपको सुन्नी आलिम काफी नहीं**, क्या आपको **मसलके अहमद रज़ा** काफी नहीं, अगर यही बस है, तो आपको वहाबी के एतराज़ से परेशान होने की ज़रूरत नहीं,

हर सुवाल का जवाब देना ज़रूरी नहीं - आज कल फ़ैशन चल गया है की जब वहाबी कोई एतराज़ करता है तो अवाम उस जवाब की तहक़ीक़ में लग जाती है, और बिला वजह अपना वक़्त बर्बाद करती और कभी गुमराह भी हो जाती है, **बाज़ चीज़ों को बे दलील मान लेना ठीक होता है**, और इसी में ईमान की

हिफ़ाज़त है,

इमाम फखरुद्दीन राज़ी (رضي الله عنه) **और शैतान** - क़ुरआन की तफ़्सीर लिखने वाले इमाम, इमाम फखरुद्दीन राज़ी ने जब वफात पाई तो आपकी क़ब्र में शैतान आया और बोला की **"अल्लाह एक है आप इसकी दलील दो"** आपने क़ुरआन से 360 के करीब दलील दी की अल्लाह एक है मगर शैतान ने आपकी हर दलील का रद्द करके अपनी दलील पेश कर दी, ये सारा मंज़र आपके पीर साहिब एक दरया के किनारे वुज़ू करते हुए देख रहे थे जब आपने देखा की मेरे मुरीद की सारी दलील शैतान ने रद्द कर दी और शैतान का वही सुवाल था की **"अल्लाह को एक साबित करना है"** तो आपके पीर ने वहीँ से फ़रमाया (मफ़हूम) “ऐ फखरुद्दीन शैतान को क्यों दलील देता है की अल्लाह एक है, बोल क्यों नहीं देता की **मैं बगैर दलील के ही अल्लाह को एक मानता हूँ"** और इस तरह आपके पीर ने आपकी मदद फरमाई, इस वाक़ये से सुन्नी मुसलमानो को इबरत लेनी चाहिए की वहाबी की हर एतराज़ की दलील मत ढूंढो, कोई कहे रफयदैन की दलील दो, कोई कहे तक़लीद की दलील दो, आप कह दो, **हम पर उलामा की पैरवी लाज़िम है,** लिहाज़ा हमें दलील की हाजत नहीं दलील आप आलिम से लो, फिर आलिम अपना काम, खुद कर देगा दलील देना आप लोगो का काम नहीं, आलिम का काम है, लिहाज़ा अवाम को चाहिए की वहाबी के हर सुवाल पर जवाब ना दे उसे शैतान जाने और आपसे दूर रखे,

(क़ुरआन इसी का हुक्म देता है की, जब याद आये तो शैतान के पास ना बेठो)

जवाबे खवास फि हिफाजते ईमान

दिले दुश्मन को रज़ा तेज़ नमक की धुन्न है

अल्लाह फरमाता है- सूरह बनी इसराइल आयत 71

"जिस दिन हम हर जमाअत को उसके इमाम के साथ बुलाएँगे"
इस आयत की तफ़्सीर में **मुफ़्ती अहमद यार खान नईमी** फरमाते है-
नुरूल इरफ़ान फि तफ़्सीर उल क़ुरआन में
"इस आयत से मालूम हुआ की दुनिया में किसी सालेह को अपना इमाम बना लेना चाहिए शरीअत में तक़लीद करके और तरीक़त में बैअत करके, ताकि हश्र अच्छो के साथ हो, इस आयत में बैअत, मुरीद, **तक़लीद**, सबका सुबूत है"
और फरमाता है अल्लाह क़ुरआने पाक में (सूरह नहल अयात 43)
"तो ऐ लोगो इल्म वालो से पूछो अगर तुम्हे इल्म नहीं"
इस आयत की तफ़्सीर में- तफ़्सीर सिरातुल जिनान फि तफ़्सीर उल क़ुरआन जिल्द:5 सफह:321 पर है
"याद रहे ये आयते करीमा तक़लीद के जवाज़ (जाइज़ होने) बल्कि हुक्म पर भी दलालत करती है"
(यानि अल्लाह क़ुरआन में हुक्म दे रहा है इल्म वालो से पूछना है, खुद अक़ल नहीं लगानी)

इमाम जलालुद्दीन सुयूती शाफ़ई (رضي الله عنه) फरमाते हैं, -
"इस आयत से उलामा ने फुरूई मसाइल में आम आदमी के लिए तक़लीद के जाइज़ होने पर इस्तदलाल फ़रमाया"
आलाहज़रत इमाम इश्क़ ओ मोहब्बत मुफ़्ती अहमद रज़ा बरेलवी फरमाते है
फ़तावा रज़विया जिल्द: 29 सफह:390 पर है
(मुतलक़ान) तक़लीद फर्ज़े क़तई है अल्लाह फरमाता है –
فاسئلواهال الذكر ان كنتم لا تعلمون
"तो ऐ लोगो इल्म वालो से पूछो अगर तुम्हे इल्म नहीं"

फ़तावा रज़विया जिल्द: 21 सफह:582 पर है

"वुजूबे तक़लीद में नस है"

फ़तावा रज़विया जिल्द: 27 सफह:644 पर है

"तक़लीदे शख्सी को शिर्क या हराम मानने वाले, गुमराह, और मोमिनो के रास्ते के अलावा पैरवी करने वाले हैं"

उलामा ने तक़लीद करने को वाजिब लिखा है और, ना करना हराम, और जो तक़लीद नहीं करते शैतान के रास्ते पर है, और हर आदमी क़ुरआन हदीस नहीं समझ सकता, और सूरह फातिहा में अल्लाह से हर मुसलमान ये दुआ करता है "हमें सीधा रास्ता चला, रास्ता उनका जिन पर तूने अहसान किया" और फिर आप देखेंगे की अल्लाह के जितने औलिया गुज़रे सभी मुक़ल्लिद थे, वरना मुजतहिद किसी ने तक़लीद का ना इनकार किया ना तर्क की, सुन्नी मुसलमानो के लिए इतना ही काफी है की, गौसे आज़म, ग़रीब नवाज़, जैसे बा-करामत वली भी किसी ना किसी इमाम के मुक़ल्लिद हुए भला ये गुमराही का रास्ता कैसे हुआ? क्या कोई शख्स गुमराही के रास्ते पर चल कर वली बन सकता है, ये आपको सोचना है,

अल्लाह से दुआ है की, मुसलमान को खुद क़ुरआन हदीस में अपनी अक़ल चलाने से महफूज़ रखे और उनका रास्ता चलाये जिन पर तूने एहसान किया और फितना ए वहाबियत से सुन्नियत की हिफाज़त फरमाये, उम्मीद करता हूँ ये जवाब आम सुन्नी के लिए वहाबी के हज़ारों सवालात पर काम आएगा,

واللہ سبحانہ وتعالیٰ أعلمُ بالصواب واللہ یرجع الیہ ماب

सुवाल:5 (1507, जिल्द:3)

क्या मज़ार शरीफ पे जा के हमे वसीलाह लेना सही है, क्या इनसे मदद मांगना शिर्क है, जवाब का मुंतज़िर क़ुरआन हदीस से जवाब दीजिये।

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

किसी नबी, वली, नेक, सालेह को अल्लाह की बारगाह में वसीला बनाना जाइज़ और क़ुरआन हदीस से साबित है क़ुरआन में फरमाता है तुम्हारा रब सूरह मईदा आयत 35 में

"ऐ ईमान वालो, अल्लाह से डरो और उसकी तरफ वसीला ढूंढों"

और फरमाता है अल्लाह सूरह बक़रह आयत 89 में "और जब उनके पास अल्लाह की वह किताब (क़ुरआन) आई जो उनके साथ वाली किताब (तोरेत) की तस्दीक फरमाती है, और इस से पहले वह उसी नबी के वसीले से काफिरों पर फतह मांगते थे, तो जब तशरीफ़ लाये वह जाने पहचाने उस से मुनकिर हो बैठे, तो अल्लाह की लानत मुनकिरों पर"

हज़रत उस्मान बिन हनीफ (رضي الله عنه) को हुज़ूर (عليه السلام) ने ये दुआ, माँगने का हुक्म दिया: ऐ अल्लाह में तेरे नबी के वसीला जलील से तेरी तरफ तवज्जो करता हूँ, या रसूलल्लाह में आपके वसीले से अपने रब की तरफ अपनी हाजत के बारे में मुतवज्जह हूँ, (तिर्मिज़ी शरीफ)

हज़रत अली (رضي الله عنه) **फरमाते हैं**: "मैंने नबी (عليه السلام) से सुना: **अब्दाल** शाम में होते है, ये 40 मर्द हैं, इनमे से जब कोई एक मरता है तो खुदा उसकी जगह दूसरा मुक़र्रर कर देता है, इनके वसीले से बारिश होती है, इनके वसीले से जंग में फतह मिलती है, और इनके वसीले से शाम वालो पर

से अज़ाब दफ़ा किया जता है" मिश्कात

सय्यिदुना इब्ने उमर (رضي الله عنه) से रिवायत की रसूलुल्लाह (صلى الله عليه وآلہ وسلم) ने फ़रमाया: " जब मोअज़्ज़िन अज़ान देता है तो अज़ान का जवाब दो, फिर मुझ पर दुरूद पढ़ो, और फिर मेरे वसीले से अल्लाह से दुआ करो"

मुस्लिम किताबुस सलात,

इमाम शाफ़ई (رضي الله عنه) फरमाते हैं - "मुझे जब कोई हाजत पेश आती है मैं दो रकाअत नमाज़ अदा करके इमामे आज़म अबु हनीफा के मज़ार पर जा कर उनके वसीले से दुआ मांगता हूँ, अल्लाह मेरी हाजत पूरी कर देता है"

खैरात-उल-हिस्सान

फ़तावा रज़विया जिल्द:9 सफह: 523 पर है

"साहिबे मज़ार की रूह को अल्लाह की बारगाह में अपना वसीला क़रार दे"

इन दलाइल से वसीला साबित है की वसीला ना कोई नई चीज़ ना आज का काम, और इस तरह वली से मदद मांगना यहाँ तक की वफ़ात बाद भी मदद मांगना जाइज़ है और वो मदद करते हैं,

फतावा अल-रमी फि फुरु अल-फिक़्हे शफाई में है

انّ الاستغاثة بالانبياء والمرسلين والاولياء والعلماء الصّالحين جائزة وللانبيا ء و للرسل والاولياء والصالحين اِغاثة بعد موتهم

“बेशक़ अम्बिया ओ मुरसलीन **औलिया** व उलामा से मदद मांगनी जाइज़ है और वह **बाद इन्तिक़ाल** भी मदद फरमाते हैं”

फतावा जमाल बिन अब्दुल्लाह में है

الاستغاثة بالاولياء ونداؤهم والتوسل بهم امر مشروع وشيئ مرغوب لاينكره الامكابر اومعاند وقد حرم بركة الاولياء الكرام

"औलिया से मदद मांगना और उन्हें पुकारना, और उनके साथ तवस्सुल करना, शराअ में जाइज़ है, और पसंददीदा चीज़ है, जिसका इनकार ना करेगा मगर हट-धर्म यह साहिबे इनआद और बेशक वह औलिया किराम की बरकत से महरूम है"

सय्यिदुना मूसा अबु इमरान (رضي الله عنه) के बारे में है

كان اذا ناداهُ مريده ، اجابہ من مسيرةِ سنةٍ اواكثر

“जब उनका मुरीद जहाँ कही से उन्हें निदा करता है, जवाब देते हैं, चाहे साल भर की दूरी पर होता या उससे भी ज़्यादा”

फ़तावा रज़विया जिल्द:29 सफह:554 पर है

बेशक़ अम्बिया मुरसलीन औलिया से मदद मांगना जाइज़ है और वह बाद इन्तिक़ाल भी मदद फरमाते हैं,

फ़तावा फ़ैज़ुर्रसूल जिल्द: 2 सफह: 483 पर है

इमाम ग़ज़ाली (رضي الله عنه) फरमाते हैं, - “जिससे उसकी ज़िन्दगी में मदद मांगी जा सकती है उससे उसके विसाल के बाद भी मदद मांगी जा सकती है"

والله سبحانه وتعالی أعلمُ بالصواب والله يرجع اليه ماب

सुवाल:6 (जिल्द:1, 445)

या अली अल-मदद, या ग़ौस अल-मदद, या पीर अल-मदद, ये सब कहना कैसा, अल्लाह के सिवा किसी और से मदद मांगना शिर्क है क्या ?

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

ये सब कहना जाइज़ है और अल्लाह के अलावा ग़ैर से मदद मांगना शिर्क नहीं, जबकि कोई ये अक़ीदा ना रखे की खुद अल्लाह मदद नहीं करता या

नहीं कर सकता तभी ग़ैर से मदद मांगता हूँ, वरना शिर्क होगा, और मुसलमानो का हरगिज़ यह अक़ीदा नहीं होता, बल्कि उनका अक़ीदा यह होता है की इन अल्लाह वालो को अल्लाह ने मदद पर क़ुदरत बख्शी है, और ये अल्लाह के दिए से मदद करते है, जो क़ुरआन हदीस से साबित है,

क़ुरआन में तुम्हारा रब इरशाद फरमाता है - (क़ुरआन 2/153)

"मदद तलब करो सब्र व नमाज़ से"

जबकि नमाज़ भी खुदा नहीं, गैर खुदा है और ना सब्र खुदा है

और फरमाता है तुम्हारा रब (क़ुरआन 5/2)

"आपस में एक दुसरे की मदद करो, भलाई और परहेज़गारी पर"

इमाम बुखारी ने हज़रत अबु हुरैरा (رضي الله عنه) से रिवायत किया:

"फ़रमाया हुज़ूर (عليه السلام) ने - सुबह और शाम और रात के कुछ हिस्सो में इबादत से मदद तलब करो"

एक और हदीस में फ़रमाया - "जब हाजत तलब करो खूबसूरत चेहरे वालो से तलब करो"

और फ़रमाया - "जब तुम में से किसी की कोई चीज़ गुम हो जाये या राह भूल जाये और मदद चाहे और ऐसी जगह हो जहाँ कोई हमदम नहीं तो उसे चाहिए यूँ पुकारे 'ऐ अल्लाह के बन्दों मेरी मदद करो. ऐ अल्लाह के बन्दों मेरी मदद करो' 'ऐ अल्लाह के बन्दों मेरी मदद करो. ऐ अल्लाह के बन्दों मेरी मदद करो' की अल्लाह के कुछ बन्दे हैं, जिन्हें ये नहीं देखता वह उसकी मदद करेंगे (इस हदीस को तबरानी ने भी नक़ल किया)

इमाम ग़ज़ाली (رضي الله عنه) फरमाते हैं, - "जिससे उसकी ज़िन्दगी में मदद मांगी जा सकती है उससे उसके विसाल के बाद भी मदद मांगी जा सकती है"

मज़ीद दलाइल फतावा रज़विया जिल्द:21 सफह:310 से पढ़े.
واللہ سبحٰنہ وتعالٰی اعلم

सुवाल:7 (जिल्द:1 478)
हम अज़ान के दरमियान या कहीं भी जब हुज़ूरे-अकरम सरकारे-दो आलम (صلی اللہ علیہ وآلہٖ وسلم) का नाम आता है तो अपने हाथ की उंगलियों को बोसा क्यों देते है ?

जवाब : بسم اللہ الرحمن الرحیم
हुज़ूर (علیہ السلام) के नामे पाक पर अंगूठों के नाखून को बोसा दे कर आँखों से लगाना बिलकुल जाइज़ है, और इसके जाइज़ होने के लिए इतना काफी है की शरीअत में ये मना नहीं, और जो काम शरीअत में नाजाइज़ नहीं होता वो फि नफ़्सिही जाइज़ होता है, ये फेल हदीस ज़ईफ़ से साबित है और उम्मत का इस पर अमल है, ज़ईफ़ हदीस अमल में लाइ जा सकती है और उम्मत के कसीर अमल से वो हसन भी हो जाती है
हदीस : सिद्दीके अकबर ने मोअज़्ज़िन को اشھد انّ محمداً رسول اللّٰہ कहते सुना (दुआ पढ़ी) और दोनों कलिमे (पर अंगुश्त) के पोरी चूम कर आँखों से लगाए इस पर हुज़ूर (علیہ السلام) ने फरमाया, जो ऐसा करे जैसा मेरे प्यारे ने किया उसके लिए मेरी शफ़ाअत हलाल हो जाएगी,

फ़तावा रज़विया जिल्द:5 सफह:433 पर है
मुल्ला अली अल-कारी (رضی اللہ عنہ) ने फ़रमाया:
قلت واذاثبت رفعہ الی الصدیق رضی اللہ تعالٰی عنہ فیکفی للعمل بہ لقولہ علیہ الصلاۃ والسلام علیکم بسنتی وسنۃ الخلفاء الراشدین
सिद्दीके अकबर से इस फेल का सबूत अमल के लिए काफी है, हुज़ूर

(عليه السلام) ने फ़रमाया, मैं तुम पर लाज़िम करता हूँ अपनी सुन्नत और अपने ख़ुलफ़ाए राशिदीन की सुन्नत"

तो सिद्दीके अकबर से किसी चीज़ का सबूत हुज़ूर (عليه السلام) से सबूत है

इमाम अस्क़लानी ने फ़रमाया-: لايلزم من كون الحديث لم يصح ان يكون موضوعا

हदीस का सही ना होने से मोज़ू (झूठा) होना लाज़िम नहीं

और मुहद्दिसीन ने फ़रमाया की ये हदीस सही नहीं, तो हदीस का सही ना होना उसके झूठे होने पर दलालत नहीं करता, सही नहीं, मसलन, **हसन** भी हो सकती है, और **ग़रीब** भी, और **ज़ईफ़** भी, जिस तरह कहा जाये की **"ये मिठाई बहूत बेहतर नहीं"** तो इसका मतलब ये नहीं वो **मिठाई ख़राब है,** मतलब ये की ज़्यादा लज़ीज़ नहीं मगर मिठाई सही और खाई जा सकती है, और इस्तिमाल में लाना भी हलाल, ठीक उसी तरह ये अंगूठे चूमने की हदीस ज़ईफ़ है मगर इस पर अमल मुस्तहब है, बल्कि सिद्दीके अकबर की सुन्नत है, और मुसलमान इस पर अमल सवाब की और मुस्तहब की नियत से करता है

फ़िक़्ह का एक क़ायदा है: - رَاٰہُ الْمُسْلِمُوْنَ حَسَنًا فَھُوَ عِنْدَ اللّٰہِ حَسَنٌ ا

(तमाम मुसलमान जिस चीज़ को अच्छा मान लें वह अल्लाह के नज़दीक भी अच्छी है,)

बस कौन मुसलमान इस फेल को ताज़ीमन नहीं करता? हर कोई ये फेल सवाब और मुस्तहब की नियत से ही करता है

फ़तावा रज़विया जिल्द:5 सफ्ह:431 पर है

“और खुद अगर कोई दलील ख़ास ना होती, तो मना पर शरा से दलील ना होना, जवाज़ के लिए दलील काफी थी,” (यानि अगर अंगूठे चूमने पर कोई दलील ना होती तो भी मना ना होना जाइज़ होने के लिए काफी था)

واللہ تعالیٰ أعلمُ بالصواب

सुवाल:8 (जिल्द:2, 625)

इमाम के पीछे किरअत मना है तो क्या इमाम को दोहराना भी इसी हुक्म के मातहत है ?

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

ये दलाइले क़ाहिरा इस बात की निशानी है

जमाअत में किरअत बेचैन दिलों की परेशानी है

मुझे सुवाल से इतना समझ आया की शायद साइल ये पूछना चाहता है की इमाम कोई सूरत पढ़े और मुक़तदी कोई और ये तो मना है, तो क्या एक जैसी सूरत भी दोहराना मना है ? यानि इमाम सूरह फ़लक़ पढ़े तो मुक़तदी भी उसके पीछे सूरह फ़लक़ पढ़ सकता है या नहीं (और अल्लाह बेहतर जानने वाला है) **जी नहीं**, इमाम के पीछे किरअत करना हनफ़ी मज़हब में जाइज़ नहीं, फिर चाहे इमाम से जुदा सूरत पढ़ी या एक जैसी, दोनों सूरत में किरअत करने वाला पाया जायेगा, और बाज़ लोग इस वस्वसे में मुब्तिला है वो समझते हैं की, ये देखने के लिए की हमें सूरत सही याद है या नहीं, तो इस नियत से पढ़ सकता है, जबकि तिलावत मक़सूद ना हो मगर ये क़ौल बातिल महज़ है, की हालते नमाज़ में हर शख्स पर नमाज़ के तमाम फ़राइज़ ओ वाजिबात की इत्तिबाह लाज़िम है, और हर मुक़ल्लिद पर अपने मुत्तहिद की पैरवी फ़र्ज़, और इसके खिलाफ कुछ नहीं, फिर जब इमाम के पीछे चुप रहना वाजिब हुआ तो ज़रूर सूरत का पढ़ना क़सदन तरके वाजिब पाया गया, और तरके वाजिब हराम के करीब होता है यानि ऐसा करने वाला सख्त गुनाहगार और इस फेल से बाज़ रहना और तौबा करना भी लाज़िम

तुम्हे ज़ुबान देने वाला रब फरमाता है - (सूरह:7 आयत 204:)

"और जब क़ुरआन पढ़ा जाये तो उसे कान लगा कर सुनो और खामोश रहो की तुम पर रहम हो"

इस आयत की तफ़्सीर में खज़ाइनुल इरफ़ान में है

"इस आयत से साबित हुआ की जिस वक़्त क़ुरआन पढ़ा जाये चाहे नमाज़ में या नमाज़ के बाहर उस वक़्त सुनना और खामोश रहना वाजिब है"

तफ़्सीर दुर्रे मंसूर जिल्द:3 सफह: 496 पर है

"हज़रत इब्ने अब्बास ने फ़रमाया ये आयत फ़र्ज़ नमाज़ों के बारे में है (यानि फ़र्ज़ नमाज़ के दौरान क़ुरआन पढ़ा जाये तो उसे कान लगा कर सुनो और खामोश रहो"

तफ़्सीर कुरतबी जिल्द:4 सफह:410 पर है

"अहले तफ़्सीर ने इस पर इज्मा किया है की इसमें सुनने से मुराद नमाज़ में क़ुरआन का सुनना है"

तफ़्सीर तिब्यनुल क़ुरआन जिल्द:4 सफह:515 पर है

“हज़रत इब्ने मसऊद ने नमाज़ पढाई, उन्होंने लोगों को इमाम के साथ नमाज़ में क़ुरआन पढ़ते हुए सुना, जब वह नमाज़ से फारिग हुए तो उन्होंने कहा, अभी तक तुम्हारी समझदारी का वक़्त नहीं आया? क्या अभी तक तुम्हे अक़ल नहीं आई ? जब क़ुरआन पढ़ा जाये तो उसे ग़ौर से सुनो और खामोश रहो, जिस तरह तुम्हे अल्लाह ने हुक्म दिया, यह हदीस फुकुह ए अहनाफ की दलील है, की नमाज़ में इमाम के पीछे किरअत नहीं करनी चाहिए"

सिरातुल जिनान फि तफ़्सीरउल क़ुरआन जिल्द:3 सफह:512 पर है

"इस आयत से इमाम के पीछे क़ुरआन पढ़ने की मुमानिअत साबित होती है और कसीर अहादीस में भी यही हुक्म फ़रमाया गया की इमाम के पीछे किरअत ना की जाये"

हदीस1 मुस्लिम:- اذ صلّيتم فاقيمواصفوفكم ثم ليؤمكم احدكم فاذاكبر فكبر واواذاقرأفانصتو

(जब तुम नमाज़ में अपनी सफे सीधी करो फिर तुम में कोई इमामत करे और वह तकबीर कहे तुम भी तकबीर कहो और जब वह किरअत करे तुम चुप रहो)

हदीस 2 तिर्मिज़ी من صلى ركعة لم يقرء فيها بام القران فلم يصل الا ان يكون وراء الامام

(जब कोई रकाअत बगैर सूरह फातिहा पढ़ी उसकी नमाज़ ना हुई, मगर जब इमाम के पीछे हो (तो हो गई))

फतावा रज़विया जिल्द: 6 सफह: 240 पर है

"हमारे उलामा ए मुज्तहिदीन बिल इत्तिफ़ाक़ अदम ए जवाज़ के क़ायल हैं, और यही मज़हबे जम्हूरे सहाबा ओ ताबईन का है, यहाँ तक की साहिबे हिदाया ने दावा ए इज्मा ए साहब किया है"

अल्लाह इस मसअले पर क़ौमे सुन्नियत को क़ौमे वहाबियत से अमन बख्शे

أمين هذاوالعلم عند واهب العلوم العالم بكل سرمكتوم

सुवाल:9 (जिल्द:2 632)

क्या फरमाते हैं, उलामा ए दीन व मुफतियाने शराअ मतीन इस मसअले में की सदल क्या होता है और सदल जो नमाज़ में मकरूह है तो क्या ये हुक्म नमाज़े जनाज़ा में भी है, बिल्हवाला इरशाद फरमाये-

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

फतावा रज़विया जिल्द:76 सफह:386 पर है

“असल ये है की सदल यानि पहनने के कपडे को बे-पहने लटकाना मकरूह तहरीमी है, और इससे नमाज़ वाजिबुल इअदह”

दुर्रे मुख़्तार जिल्द:1 सफह: 91 पर है

كره سدل ثوبه وكره كف اى رفعه ولولتراب كمشمركم اوذيل

(कपडे का लटकाना इसी तरह कपडे का उठाना भी मकरूह है चाहे कीचड़ की वजह से हो जैसे कोई आदमी आस्तीन और दामन उठा ले)

रद्दुल मोह्तार 1/473 पर है - حررالخیر الرملی مایفید ان الکراھۃ فیہ تحریمیۃ

(शैख़ खैरुद्दीन रमली की इबारत इस बात की मुफीद है की इसमें कराहत तहरीमी है)

ये तो साबित हुआ की सदल मुतलक़न मकरूहे तहरीमी है, अब इस तरफ भी एक नज़र की नमाज़े जनाज़ा में भी मकरूह है या नहीं, ग़ौर करने का मुक़ाम ये है की, असल में फुकहा ने सदल को मकरूह तहरीमी इसलिए क़रार दिया, की ये पहनने वाले कपडे का इस्तिमाल ख़िलाफ़े मोअतद है, सभी पर रोशन है, जब चार दीवारी में पढ़ी गई नमाज़ मकरूह तहरीमी हो जाती है तो उसका दोहराना भी वाजिब क़रार पाता है, और ये भी रोशन की नमाज़े जनाज़ा मस्जिद में जाइज़ नहीं तो बीच सड़क पर इमाम का ख़िलाफ़े आदत कपडे का इस्तिमाल क्योंकर मकरूह ना होगा, मसलन इमाम का लोगो के सामने इस तरह कुर्ता डाल लेना की उसमे आस्तीन ना पहने तो ये नमाज़ (जनाज़ा हो या रुकू सुजूद वाली) वाजिब-उल-एआदा होती है, बल्कि इमामे अहले सुन्नत ने फतावा रज़विया में फ़रमाया "इसमें नीचे क़मीज़ और अदमे क़मीज़ का कोई दखल नहीं, सदल सदल है अगरचे क़मीज़ पर हो" और इमाम का ये क़ौल की **"पहनने के कपडे को बे-पहने लटकाना मकरूह तहरीमी है"** साफ बिल क़ैद के साथ है, वरना जब रुकू सुजूद वाली नमाज़ का अलग हुक्म होता है तो उसे वाज़ेह किया जाता है, मसलन कहा गया "नमाज़ में वुज़ू का टूट जाना नमाज़ को तोड़ देगा" अब इसमें हर नमाज़ दाखिल हो गई, चाहे फ़र्ज़ हो नफिल या जनाज़ा, और उलेमाए अहनाफ कपडे और बालो को मोड़ने, गुरसने, लपेटने, लटकाने, पर जो हदीस दाल लाते है यानि

امرت ان اسجد علی سبعۃ اعضاء وان لاکف شعرا ولا ثوباروا السنۃ عن ابن عباس رضی اﷲ تعالٰی عنھما

(मुझे सात आज़ा पर सजदा करने का हुक्म दिया गया है, और इस बात का हुक्म है की बाल समेटू ना कपडे उठाऊं, इस रिवायत को सिहा सित्ता ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास से रिवायत किया)

तो मुतक़लन दलील बनाते हैं, ना की नमाज़े जनाज़ा को इससे ख़ारिज करते है, फिर दुर्रे मुख़्तार ने फ़रमाया-كل صلوة اديت مع كراهة التحريم وجب اعادتها
(हर वो नमाज़ जो कराहते तहरीमी के साथ अदा की गई, उसका लौटाना वाजिब होता है,)
इनका **"हर वो नमाज़"** लिखना ही इस बात पर दाल है की इसमें **रुकू सुजूद व गैर रुकू सुजूद सब शामिल हैं**, वरना इस फ़िक़्ह का क़ायदा इस तरह होता
(हर वो रुकू सुजूद वाली नमाज़ जो कराहते तहरीमी के साथ अदा की गई, उसका लौटाना वाजिब होता है,)
और नमाज़े जनाज़ा की तक़रार जाइज़ नहीं लिहाज़ा अगर ये सूरत इस नमाज़ में पेश आई तो एक के पढ़ने से भी नमाज़ हो गई, चाहे दस लोगो ने सदल किया हो, सदल तो सदल अगर तमाम मुक़तदी भी हालते नमाज़े जनाज़ा में बे-वुज़ू हो जाएँ, तो भी इमाम की नमाज़ काफी है, इसी तरह अगर औरत की इमामत में नमाज़ जाइज़ नहीं, मगर नमाज़े जनाज़ा की इमामत औरत ने की तो भी नमाज़े जनाज़ा हो गई, दोहराने की हाजत नहीं, फतावा आलमगीरी में है
"इसके लिए जमाअत शर्त नहीं, एक भी पढ़ ले फ़र्ज़ अदा हो जायेगा"

बहारे शरीअत जिल्द:1 सफह:826 पर है
"इमाम ताहिर ना था तो नमाज़ फिर पढ़े, अगरचे मुक़तदी ताहिर हो, क्योंकि जब इमाम की नमाज़ ना हुई तो किसी की ना हुई, और अगर इमाम ताहिर था और मुक़तदी बिला तहारत तो नमाज़ दोहराई ना जाये"

“अगर औरत ने नमाज़े जनाज़ा पढाई और मर्दों ने इसकी इक़्तिदा की तो नमाज़ लौटाई ना जाये, अगरचे मर्दो की इक़्तिदा औरत के पीछे सही नहीं मगर औरत की नमाज़ तो हुई यही काफी है, और जनाज़े की नमाज़ की तक़रार जाइज़ नहीं,”

लिहाज़ा मुक़्तदी से सदल सादिर हुआ तो नमाज़े जनाज़ा दोहराया ना जायेगा, अगर इमाम से हुआ तो नमाज़ वाजिबुल एआदा होगी,

والله تعالیٰ اعلم بالصواب والله یرجع الیہ ماب

सुवाल:10 (जिल्द: 2, 693)

हज़रत, हमारे आक़ा रहमतुल्लिल आलमीन की पैदाइश और वफात की तारीख बताएं तफ्सील से?

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

पैदाइश -

हुज़ूर की पैदाइश 12 रबीउल अव्वल **पीर शरीफ** के दिन हुई

आला हज़रत इमामे अहले सुन्नत फतावा रज़विया जिल्द:26 सफह: 408 पर तहरीर फरमाते हैं

“रजब, सफर, रबीउल-अव्वल, मुहर्रम, रमज़ान, सब कुछ कहा गया और सही व मशहूर क़ौल रबी उल अव्वल है”

मदारिजुन नबूवत जिल्द:2 सफह: 14 पर है - مشہورآنست کہ درربیع الاول بود

(मशहूर यही है की विलादत बा सआदत माहे रबीउल अव्वल शरीफ में हुई)

अल मवाहीबुल लदुनिया में है: وھوقول جمہورالعلماء

और वह जमहूर उलामा का क़ौल है) فی شھرربیع الاول علی الصحیح (सही क़ौल के मुताबिक़ रबीउल अव्वल में है)

अल्लामा इब्ने ज़ौजी (رضي الله عنه) ने नसिमुल रियाज़ में नक़ल किया-

اتفقوا علی انہ ولد یوم الاثنین فی شھر ربیع الاول
इस पर उलामा मुत्तफिक़ हैं, आप माहे रबीउल अव्वल पीर के दिन पैदा हुए)

वफ़ात -

हज़रत अली (رضي الله عنه) से रिवायत है की फरमाते हैं-:

قال مات رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم یوم الاثنین لاثنتی عشرۃ مضت من ربیع الاول

(हुज़ूर की वफ़ात रोज़ दो शम्भा (पीर) के दिन 12 रबीउल अव्वल को हुई)

शरह लादुनिया में **अल्लामा ज़रकानी** (رضي الله عنه) फरमाते हैं-

الذی عند ابن اسحٰق والجمھور انہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم مات لاثنتی عشرۃ لیلۃ خلت من شھر ربیع الاول

(हुज़ूर का विसाल शरीफ माहे रबीउल अव्वल की 12 तारीख को हुआ)

واللہ سبحانہ وتعالٰی أعلمُ بالصواب

सुवाल:11 (जिल्द: 2, 739)

हज़रत मुरीद के मायने क्या है, क्या किसी का मुरीद होना ज़रूरी होता है ?

जवाब : بسم اللہ الرحمن الرحیم

वैसे तो दीनी शागिर्द को भी लुग़वी एतबार से मुरीद कहा जाता है मगर तरीक़त की इस्तिलाह में मुरीद कहते है किसी जामाए शराइत पीर के हाथ पर खुद को बेच देने का नाम, यानि किसी की गुलामी का पट्टा अपनी गर्दन में डालने का नाम ताकि कल बिना मालिक के आवारा शुमार ना किया जाये, और मुरीद नाम है अपने ज़ाहिर और बातिन की इस्लाह का नाम, और अल्लाह व रसूल की नज़दीकी हासिल करने का नाम, ईमान की हिफाज़त का नाम, आख़िरत को सवारने का नाम, कल कियामत में किसी के साये में रहने का नाम, क़ब्र में आराम पाने का नाम, जो बिना वली ए कामिल की नज़र के, सब के लिए मुमकिन नहीं, दोनों जहाँ की भलाइयां और ईमान की हिफाज़त के लिए किसी कामिल पीर से मुरीद होना चाहिए-

मुरीद होना सुन्नत है क़ुरआने पाक में अल्लाह इरशाद फरमाता है-

(सूरह बनी इसराइल आयत: 17)

"जिस दिन हम हर जमाअत को उसके इमाम के साथ बुलाएँगे"

इस आयत की तफ़्सीर में नुरुल इरफ़ान में है-

इससे मालूम हुआ की दुनिया में किसी नेक को अपना इमाम बना लेना चाहिए, शरीअत में तक़लीद करके और **तरीक़त में बैत हो कर,** ताकि हश्र अच्छो के साथ हो, अगर सालेह इमाम ना होगा तो उसका इमाम शैतान होगा

और सहाबा ने हुज़ूर से बैत की जिसे क़ुरआन में इरशाद फ़रमाया-

(सूरह फ़तेह आयत 10)

"वह जो तुम्हारी बैत करते है, वह तो अल्लाह ही से बैत करते है, उनके हाथों पर अल्लाह का हाथ है"

इस आयत से मुरीद होने का साफ़ सबूत है

बाज़ औलिया किराम से भी साबित है जैसा की **बायज़ीद बिस्तामी** से भी रिवायत है -

روی عن ابی یزید (رضی اللہ تعالٰی عنہ) انہ قال من لم یکن لہ استاد فامامہ الشیطان

(जिसका कोई पीर नहीं उसका पीर शैतान है)

इसलिए बेहतर है किसी नेक शख्सियत से मुरीद हो जाना चाहिए ताकि **गौसे आज़म के मुरीदों में शामिल होना का शरफ़ हासिल हो** सरकार गौसे आज़म फरमाते हैं- "मेरा हाथ मेरे मुरीद पर ऐसा है, जैसे ज़मीन पर आसमान"

और फ़रमाया **हुज़ूर गौसे आज़म** (رضي الله عنه) ने -

मुझे एक दफ्तर दिया जो हद्दे नज़र तक वसी है जिसमे मेरे मुरीदों के नाम है, कियामत तक और मुझे फ़रमाया गया ये सब हमने तुम्हे दे डाले"

बस इतना काफी है की मुरीद होने का कोई नुकसान नहीं बल्कि अमले नेक और रूहानियत में तरक़्क़ी ही होती है

واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم-

सुवाल:12 (जिल्द: 2, 754)
हज़रत استوا على العرش पर अहले सुन्नत का मोक़ूफ़ और अक़ीदह बयान फरमाये जज़ाक अल्लाह

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم
तमाम तारीफ और इबादत सिर्फ अज़मत वाले अल्लाह के लिए, जिसने अक़्ल बख्शी की हम उसकी क़ुदरत के नज़ारों से उसकी शान का अंदाज़ा लगाए, और जिसने मना फ़रमाया की **मुतशाबिहत में नज़र करना दिलो का टेडापन है**, वो हँसता है, बन्दों को पकड़ता है, मगर मिस्ले बशर नहीं, हाँ ऐसा **जैसा उसकी शान के लाइक**, और लम्हा लम्हा दुरूदे अज़ीम सुल्ताने मदीना के लिए जिन्होंने फरमाया की अल्लाह की ज़ात में गौर फ़िक्र मना है, ताकि हम गुमराही और वसवसों से बचे और दुरूद उनकी आल और असहाब पर बड़ी अज़मत वाले हैं,
क़ुरआन जिस मायने पर मुश्तमिल होता है उनमे से एक को मुतशाबिहत कहते है, इसका मतलब ये होता है की, उस अल्फ़ाज़ का आम लफ़्ज़ी मायने तो मालूम होता है, मगर **मुराद नहीं,** और ना उस मायने से ज़ाहिरी मुराद ले सकते हैं, बल्कि उस पर ईमान लाना ज़रूरी है, बाकी उसका मतलब अल्लाह व रसूल जाने ऐसा क़ुरआन में बहुत जगह हैं जिसका ज़िक्र नीचे आएगा, मगर हम अपने जवाब में उस आयत का ज़िक्र करेंगे जो साइल ने अपने सुवाल में पूछी है, इस का जवाब सारे मुताशबिहात के लिए हो जायेगा,

सूरह अराफ़ पारा 8 आयत 54 में है
"बेशक़ तुम्हारा रब अल्लाह है, जिसने आसमान और ज़मीन 6 दिन में बनाये फिर अर्श पर इस्तवा फ़रमाया (जैसा उनकी शान के लाइक है)"

तफ़्सीर दुर्रे मंसूर जिल्द:3 सफह:: 289 पर है

बिला शुबह तुम्हारा रब अल्लाह है, जिसमे पैदा फ़रमाया आसमानो और ज़मीन को 6 दिन में फिर मुतमक़्क़िन हुआ अर्श पर (जैसा उसे ज़ेबा है)

इमाम इब्ने अबि हातिम (رضي الله عنه) ने, हज़रत काअब से ये क़ौल नक़ल किया है की, "अल्लाह ने जिस वक़्त मख़लूक़ को पैदा फरमाया तो इस तरह अर्श पर मुतमक़्क़िन हुआ **जिस तरह उसे ज़ेबा है**"

उम्मुल मोमिनीन हज़रते **सलमा ने** "ثُمَّ اسْتَوَى عَلَى العَرْشِ" की तफ़्सीर में फ़रमाया की, **इसकी कैफियत अक़्ल से बाहर है, اسْتَوَى गैर मजहूल है इसका इक़रार करना ईमान है, इनकार करना कुफ्र.**
हज़रत राबिआ से पूछा गया कि रब के अर्श पर मुतमक़्क़िन होने की क्या कैफियत है, फ़रमाया اسْتَوَى गैरे मजूल है और अल्लाह की जानिब से पैग़ाम है रसूल पर तुम लोगो तक पहुंचना लाज़िम है, और हम पर इसकी तस्दीक करना वाजिब है

हज़रत मालिक बिन अनस (رضي الله عنه) से मुतमक़्क़िन की कैफियत पूछी गई, तो फ़रमाया- "कैफियत अकाल से वरा है, اسْتَوَى गैरे मजूल है, इस पर ईमान लाना वाजिब है, **इसके बारे में सुवाल करना बिदअत है** और मुझे तो तेरे गुमराह होने का खौफ है "

'استوا على العرش' की तफ़्सीर के मुताल्लिक़

तफ़्सीरे मज़हरी जिल्द:3 सफह:409 पर है,

इमाम बग़वी फरमाते हैं, मुताज़िला **इस्तवा** की इस तरह यानि ग़लबे से तवील करते हैं, मगर अहले सुन्नत फरमाते हैं- , 'استوا على العرش' अल्लाह की सिफ़त है **इसकी कैफियत हमारे फेहम से बाहर है**

और तफ़्सीरे नईमी में **मुफ़्ती अहमद यार खान नईमी** फरमाते है (तफ़्सीरे नईमी जिल्द:8 सफह:47)

'استوا' का माइना है बराबर होना, वह मायने यहाँ मुराद नहीं, क्यूंकि बराबर तो छोटे बड़े जिस्म के साथ होता है, रब जिस्म से पाक है, और इस सूरत में इसके बाद "अला" ना आता, रही ये बात की 'استوا' के क्या मायने है तो इसके बारे में तीन क़ौल हैं, 1. ये मुतशाबिहात से है इसके मायने रब के सुपुर्द करो, इस पर ईमान लाओ, तहक़ीक़ ना करो, यही तरीक़ा बहुत सलामती का है, 2. इससे मुराद ग़लबा फरमाना, 3. अहकाम जारी फरमाना"

बस इससे साफ़ है की हमें पहले क़ौल की पैरवी बेहतर है की ये **मुतशाबिहात** से है, यानि इसके मायने नहीं किये जायेंगे, इसीलिए **आलाहज़रत इमाम अहले सुन्नत** ने इस आयत की तर्जुमे में फ़रमाया **"और अर्श पर 'استوا' फ़रमाया (जैसा उसकी शान के लाइक)**

मगर कुछ देवबंदी आलिमो ने अल्लाह की ज़ात के लिए यह तर्जुमा भी कर दिया और वह मुतशाबिआहात से धोका खा गए, या फिर उनको तफ़्सीर का इल्म नहीं था, इसका तर्जुमा किया

"अल्लाह आसमान पर जा बैठा,"

"अल्लाह आसमान पर चढ़ गया"

"अल्लाह आसमान पर बैठ गया"

यह मायने अल्लाह की शान के लाइक नहीं, अव्वल तो बैठना, चढ़ना जिस्म के साथ खास होता है, अगर अल्लाह आसमान पर बैठ गया तो इसका मतलब होता की आसमान अल्लाह से बड़ा है, अगर आसमान बड़ा नहीं तो सुवाल यह है की जब आसमान बड़ा नहीं तो अल्लाह कैसे बैठ गया, और जिस

जाहिल ने इसका तर्जुमा ये किया की अल्लाह आसमान पर चढ़ गया तो इससे यह बात लाज़िम आ रही है की अल्लाह एक जगह से दूसरी जगह चढ़ गया, तो फिर पहली जगह अल्लाह से खाली ? जबकि मुसलमान का अक़ीदह है की अल्लाह की रहमत हर जगह है,
जहाँ मायने में अल्लाह की शान के खिलाफ मअना बनता हो तो वहां तावील फ़र्ज़ है, 'استوا' में यही सलामती है की यह हक़ है, **कैसा हक़ अल्लाह जाने**

खुलासा ए कलाम :- यह है की हमें ज़रूरी है की استوا पर ईमान लाएं, और उसकी तहक़ीक़ ना करें, ना इसका लफ़्ज़ी माना मुराद लें,
बल्कि ये जाने की 'استوا' हक़ है, अब कैसा ग़लबा पाया वो अल्लाह जाने,

सुराह आले इमरान पारा :3 आयत: 7 में हे
"और दूसरी आयतें वह है जिनके मायने में इस्तिवा है, वह जिनके दिलों में टेढ़ापन है, वह (मुतशाबिहात के) पीछे पड़े हैं,"

इस फरमान से ये मालूम हुआ की जो अल्फ़ाज़ क़ुरआन में मुतशाबिहात हैं, उनके पीछे पड़ जाना, अक़्ली और ज़ाहिरी मायने मुराद लेना, गुमराह लोगों का काम है, अल्लाह से दुआ है की अहले सुन्नत के ईमान की हिफाज़त फरमाए
واللہ تعالیٰ اعلم بالصواب واللہ یرجع الیہ ماب

सुवाल:13 (जिल्द: 2, 1042)
सुवाल यह है की नबी करीम (صلی اللہ علیہ وآلہ وسلم) ने कभी किसी को अपने हाथ या क़दम का बोसा दिया, अपनी फानी ज़िन्दगी में इस सुवाल का जवाब किसी भी हदीस से दें, और मज़ार शरीफ की क़दम बोसी करना जाइज़ है ?

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

अव्वल तो यह क़ायदा ही बातिल है की हर चीज़ वही जाइज़ समझी जाये जो हुज़ूर ने की, और हर वो चीज़ नाजाइज़ जो हुज़ूर ने नहीं की, ये एतराज़, **जाहिलाना, फासिकना, बेवकूफाना और ग़ैर ज़िम्मेदाराना है,** और ऐसा मनघड़त क़ायदा बनाने वाला शागिर्दी इब्लीस है, यानि अहले खबीस ही का काम है, असल यह है की "हर वह चीज़ जिसे शरीअत ने मना ना किया वो जाइज़ है" (चाहे नबी ने किया हो या नहीं सहाबा ने किया हो या नहीं) और जिस चीज़ के करने का हुक्म **अल्लाह, रसूल ने नहीं दिया वो भी, जाइज़ होता है** , फिर अगर आप देखो की क़दम बोसी नबी की सहाबा ने नहीं की तो शरीअत ने इसे मना भी नहीं किया, **वरना सहाबा ने ना बुखारी पढ़ी ना मुस्लिम फिर इन किताबो की दलील क्यों पकड़ी जाती है,** मगर सही फ़रमाया आलाहज़रत ने- **"पड़ी है अंधे को आदत की शोरबे ही से खाये,"**

मिश्कात शरीफ में है

हज़रते ज़ारा (رضي الله عنه) फरमाते हैं, की जब हम मदीना में आये तो जल्द ही अपनी सवारिओं से उतर पड़े, हमने हुज़ूर के हाथ या पाऊं का बोसा लिया,

इसकी शरह अशातुल लमआत में शैख़ अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी फरमाते है- "इस हदीस से पाऊं चूमने का जाइज़ होना साबित हुआ"

आलाहज़रत फ़तावा रज़विया जिल्द: 23 सफह: 745 पर फरमाते हैं,,

"क़दम बोसी ...पीर, व आलिमे दीन, सादात (अहले बैत) व सुल्ताने आदिल, और वालिदेन की जाइज़ है"

क़ब्र को बोसा

मौजूदा दौर में मेरी नाक़िस तहक़ीक़ के मुताबिक़ इसकी दो सुरते हो सकती हैं, ऐसे मज़ार पर चादर चूमना जहाँ देवबंदी, वहाबी मौजूद हों, और वो लोगों को इस फेल पर सजदा बता कर गुमराह करे, तो ऐसे मज़ार पर इस फेल से ज़रूर ज़रूर बाज़ रहना चाहिए, ताकि गैर फ़िरक़े वालो को कहने का मौका ना दिया जाये, और हदीस भी इसी पर शाहिद है की, (मफ़हूम) **"ऐसे काम से बचो जिसमे उंगली उठाई जाये,"** और ऐसा मज़ार जहाँ देवबंदी वहाबी ना हो तो चादर चूमना बरकत के लिए जाइज़ है, जैसे बरेली में इमाम अहले सुन्नत की मज़ार, बाज़ उलामा इसकी (मज़ार की कदमबोसी) की इजाज़त देते हैं, और जमहूर उलामा मकरूह जानते हैं- फिर इससे बचना ही चाहिए, जैसा की अशातुल लमआत शरह मिशकात जिल्द:1 सफह:716 पर शैख़ अब्दुल हक़ फरमाते है- مسح نہ کند قبررا بدست وبوسہ نہ دہدآں را
(क़ब्र को हाथ ना लगाए ना बोसा दे)

मदारीजुन नबूवत जिल्द: 2 सफह: 424 पर हैं,

دربوسہ دادن قبر والدین روایت بیہقی می کنند وصحیح آنست کہ لا یجوز است

(वालिदेन की क़ब्र को बोसा देने के बारे में एक रिवायत बहीक़ी ज़िक्र करते हैं, मगर सही यह है की नाजाइज़ है)

फ़तावा रज़विया जिल्द: 9 सफह: 523 पर हैं,

“मज़ार को ना हाथ लगाए ना बोसा दे,”

واللہ سبحانہ وتعالیٰ أعلمُ بالصواب

सुवाल:14 (जिल्द: 3, 1938)

इस मेसेज मे कितनी सच्चाई हे मुझे रास्ता बताऐ और गुमराही से बचाये

हजरत, रसूलल्लाह सल० अलैहि० ने फ़रमाया "जिस ने तावीज़ लटकाया उसने शिर्क किया" (मसनद-ए-अहमद ,ह:154/4,हाकिम ,ह:219/4,सिलसिला सहीह,ह:492) मुहम्मदुर रसूलल्लाह सल० अलैहि० ने फ़रमाया "जिसने तावीज़ लटकाया अल्लाह उसकी मुराद पूरी ना करे" (मसनद-ए-अहमद ,ह:4/15,हाकिम ,ह:4/21)

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

तावीज़ दुआ दम जाइज़ मक़सद के लिए जाइज़ और सवाब है, हदीस में है की जो अपने मुसलमान भाई को जिस तरह फायदा पंहुचा सकता हो पहुचाये, और तावीज़ जो दुश्मनी या दुसरे ग़लत मक़ासिद के लिए करते है हराम है और कभी कुफ्र भी होते है, ऐसा करने वाला सख्त गुनहगार है, अब रहा वह जो हदीस सुवाल में दर्ज है, उसका मतलब हे की कुफ्रिया, शिर्किया तावीज़ मना है क्यूंकि पहले दौरे जहालत में लोग अपने बुतों के नाम के तावीज़ पहनकर शिफा की उम्मीद रखते थे, तो ये हुक्म उस तरह के तावीज़ के लिए है, नाकि क़ुरआनी आयात को कहा गया, क्यूंकि क़ुरआनी आयतों वाले तावीज़ में शिफा है, सूरह फातिहा शिफा है, क़ुरआन शिफा है लिहाज़ा ऐसे तावीज़ जो क़ुरआनी आयात से हो जाइज़ बल्कि हदीस से साबित हैं,

मुसनद अहमद जिल्द: 2 सफह: 400, हदीस: 4708 पर हैं

“हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर अपने बालिग़ बच्चो को सोते वक़्त, यह कलिमा पढ़ने को कहते” -

"بِسْمِ اللهِ اَعُوْذُبِكَلِمَاتِ اللهِ التَّامَّةِ مِنْ غَضَبِهٖ وَعِقَابِهٖ وَشَرِّعِبَادِهٖ وَمِنْ هَمَزَاتِ الشَّيَاطِيْنِ وَاَنْ يَّحْضُرُوْنَ"،

और उनमे से जो नाबालिग होते याद ना कर सकते, तो आप लिख कर तावीज़ बच्चो के गले में डाल देते

बहारे शरीअत जिल्द:3 सफ़ह: 652 पर हैं

“गले में तावीज़ लटकाना जाइज़ है जबकि वह तावीज़ जाइज़ हो, यानी आयते क़ुरआनी या इस्मे इलाही, दुआओ से तावीज़ किया गया हो और बाज़ हदीसो में जो मुमानिअत आई है, उससे मुराद वह तावीज़ है, जो नाजाइज़ अलफ़ाज़ पर मुश्तमिल हो, जो ज़माना ए जाहिलियत में किये जाते थे”

फतावा अफ्रीका सफह: 168 पर हैं

"जाइज़ तावीज़ (जो) क़ुरआने करीम या अस्मा ए इलाहिया या दुआओ से हो उसमे असलन हर्ज़ नहीं, बल्कि मुस्तहब है, हदीस में फ़रमाया -तुम में से कोई शख्स अपने मुसलमान भाई को नफा पंहुचा सके तो पहुचाये"

मुफ़स्सिरे शहीर हकीमुल उम्मत हज़रते अल्लामा मौलाना, **मुफ़्ती अहमद यार खान नईमी** - मिरातुल मनाजीह शरह मिशकातुल मसाबीह जिल्द: 3 सफह: 252 पर लिखते है

“ये दोनों सुरते (फलक, नास) सिर्फ जादू के लिए ही नहीं बल्कि दूसरी आफतों में भी काम आती हैं, अगर इनका तावीज़ लिख कर साथ रखा जाये, तो भी अमन मिलता है, क़ुरआनी आयात से तावीज़ जाइज़ है "

फ़तावा रज़विया जिल्द: 24 सफह: 208 पर हैं,

"तावीज़ बेशक अहादीस और अइम्मा ए कदीम और हदीस से साबित है"

फ़तावा रज़विया जिल्द: 24 सफह: 197 पर हैं,

"अमलियात व तावीज़ अस्मा ए इलाही व कलामे इलाही से ज़रूर जाइज़ है, जबकि उनमे कोई तरीक़ा ख़िलाफ़े शरा ना हो"

हदीस में हुज़ूर से अर्ज़ की - जो (दम, दुआ) हम करते हैं, जो दुआए परहेज़ हमारे इस्तिमाल में है, क्या ये अल्लाह की तक़दीर पलट देते हैं, फ़रमाया - "ये खुद अल्लाह की तक़दीर से हैं"

शरह (खुलासा)- तावीज़, गंडे , दम, दुरूद, झाड़फूंक, अगर क़ुरआनी आयात या हदीस की दुआओं, या बुज़ुर्गों के अमाल से हो, तो जाइज़ वरना मना, यानि इनका तावीज़ जाइज़ है, और तक़दीर में यह लिखा जा चुका है, की फुला बीमारी फुला दवा या तावीज़ से जाएगी, या फला मुसीबत इस झाड फ़ूंक या इस परहेज़ से दफा होंगी, मिस्ले दवा के इलाज है, और जाइज़ है, की सुन्नते सहाबा और सुन्नते रसूल है

सूफ़िया फरमाते हैं - वज़ीफ़ा, अमलियात, तावीज़ों के फायदे हासिल करने के लिए नमाज़ की पाबन्दी ज़रूरी है
जैसे औरते अपने शोहर को अपने काबू में करने के लिए, तावीज़ करवाती हैं, ऐसे तावीज़ करना भी शरीअत के खिलाफ है, **क़ुरआन ने मर्द को हाकिम बनाया है, औरत को नहीं**, इसी तरह दो मुसलमानो के बीच दुश्मनी करवाने के लिए, या बीवी शोहर में फसाद करवाने के लिए, तो दोनों गुनहगार हैं, करने वाला भी और करवाने वाला भी, हदीस शरीफ में हुज़ूर ने फ़रमाया:-
ليس منّا من خبب امرأة على زوجها
(जो किसी औरत को शोहर से बिगाड़े वो हम मे से नहीं)
واللہ اعلم و رسولہ اعلم ، عزوجل وصلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم

सुवाल:15 (जिल्द: 2, 1128)
हज़रत क्या क़ब्रिस्तान में अगर कोई शख्स सलाम करे तो मुर्दे उसका सलाम

सुनते हैं, और जवाब देते है, क़ुरआन हदीस की रौशनी में वज़ाहत फरमाएं?

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

(खुत्बा) तमाम इबादात और तारीफ उसी समी ओ बसीर अज़मत, वाले इज़्ज़त वाले, इल्म वाले, हिल्म वाले, अल्लाह के लिए, जिसकी दी हुई ताक़त से सुनती है चींटिया भीं, **हज़रत सुलैमान के लश्कर की आवाज़**, और दुरूदो सलाम हो ग़मज़दा की सुनने वाले, आक़ा ओ मौला पर, जिसके लिए इमाम ने कहा, **"दूरो नज़दीक के सुनने वाले वो कान"** और उनकी आल ओ असहाब और तमाम मुसलमान पर, या इस तरह अर्ज़ करूँ की, **"एक मेरा ही रहमत में दावा नहीं, शाह की सारी उम्मत पे लाखो सलाम"**

अपने रब से उम्मीद करता हूँ की साइल मुझ पर इतना तो यक़ीन करता ही होगा, की अगर में इस सुवाल के जवाब में ये अर्ज़ कर दूँ, की, **"जी हाँ, मुर्दे सुनते हैं, और जवाब भी देते है,"** तो साइल को बस होगा, मगर अक्सर देखा जाता है की हमारी सुन्नी अवाम के ज़हन में, ये सुवाल खुद नहीं आते बल्कि, इब्लीस के सगे रिश्तेदारों (देवबंदी, वहाबी) के ज़रिये, उनके दिलों में डाले जाते हैं, ताकि गुमराह करे जन्नती मुसलमानो को, इसलिए इस सुवाल का जवाब तफ्सील से अर्ज़ किया जा रहा है, ताकि आइंदा कोई भी वहाबी दिले मोमिन में वस्वसा डाले, तो ये तहरीर उसके ईमान की हिफाज़त में मददगार हो, क्यूंकि **"ये रज़ा के नेज़े की मार है"**

मुर्दों के सुनने पर दलाईले काहिरा

मुर्दों को ज़िंदा और ज़िन्दों को मारने और मुर्दों को मार कर फिर से ज़िंदा करने वाला रब फरमाता है अपने पाकीज़ा क़ुरआन सूरह फ़ातिर आयत: 22 में, ان الله يسمع من يشاء (बेशक अल्लाह सुनाता है जिसे चाहे)

वैसे तो बात इस वार पर ख़तम हो गई की, जब **अल्लाह हर मुमकिन पर क़ादिर** है और वह कहता है की **मैं सुनाता हूँ जिसे चाहूँ** तो अब ग़ैर की बातो पर नज़र की ज़रूरत ही किया, वो अल्लाह सुनाता है मुर्दा खुद नहीं सुनता, तो अब कौन है जो अल्लाह की क़ुदरत और ताक़त पर बंदिश लगाए, और कहे की अल्लाह इस पर क़ादिर नहीं, वरना बस इसी एक आयत के रद्द में दलील ले आओ, जिससे ये साबित हो जाये की अल्लाह भी नहीं सुना सकता मुर्दों को, मगर फ़ज़्ले खुदा से ये अहले सुन्नत का खासा है, की गुमराह को उसके असली घर (जहन्नम) तक ही पंहुचा कर चेन लेते है, अब इस पर एक एतराज़ यह किया जाता है की मुर्दा कैसे सुनता है वह तो मर गया, अहले सुन्नत का ये अक़ीदा हरगिज़ नहीं, की कोई अपनी ताक़त से सुनता है, या देखता है, बल्कि हमारा नजरिया तो सूरज की तरह चमकदार है, जो भी सुनता है अल्लाह ही की दी हुई ताक़त से सुनता है, अब ये अल्लाह जाने की किसी को दूर से सुना दे या क़रीब से, हमें किया गरज़ की अल्लाह की क़ुदरत या ताक़त पर एतराज़ करे, और कोई ये ईमान रखे की, **नबी वली या मज़ार वाला, या कोई भी मुर्दा अपनी ताक़त से (बिना रब के दिए) सुनता है, तो वह सुन्नी ही नहीं बल्कि काफिर है,** मगर अहले सुन्नत के मोक़ूफ को ग़लत तरीके से अवाम में पेश किया जाता है, हम ये नहीं कहते की कोई खुद सुनता है, बल्कि फिर यही क़ुरआन की दलील की

ان الله يسمع من يشاء (बेशक अल्लाह सुनाता है जिसे चाहे)

सहीह बुखारी और मुस्लिम में अबू **सईद खुदरी** से मरवी है फ़रमाया दूरो नज़दीक के सुनने वाले आक़ा ने -

اذا وصف الجنازه واحتملها الرجال على اعناقهم، فان كانت صالحة قالت قد مونى وانكانت غير صالحة قالت لاهلها يا ويلها ان تذهبو بها بسمع صوتها كل شيئ الا الانسان ولو سمع الانسان لصعق

(जब जनाज़ा रखा जाता है और मर्द उसे अपनी गर्दनों पर उठाते हैं, अगर नेक होता है कहता है मुझे आगे बढ़ाओ, और अगर बद होता है कहता है खराबी उसकी कहाँ लिए जाते हो, हर शेय उसकी आवाज़ सुनती है, मगर आदमी)

मुसनद अहमद और तबरानी ने इस हदीस को नक़ल किया,

ان الميّت يعرف من يغسله ويحمله ومن يكفنه ومن يدليه فى حفرته

(बेशक मुर्दा पहचानता है उसको जो ग़ुस्ल दे, और उठाये, और जो कफ़न पहनाये और जो क़ब्र में उतारे)

इमाम जलालुद्दीन सुयूती (رضي الله عنه) ने शरह सुदूर में इसे फ़ारूक़े आज़म से रिवायत किया

مامن ميّت يوضع عيل سريره فيخطى به ثلچ خطوات الاتكلم بكلام يسمع من شاء الله الاّ الثقلين الجن والانس

जब मुर्दे को जनाज़े पर रख कर तीन क़दम ले चलते हैं, (मुर्दा) कलाम करता है, जिसे सब सुनते हैं, जिन्हे खुदा चाहे, सिवाए इंसानों के और जिन्नो के)

देखो सुन्नी मुसलमानो तुम्हारा रब कैसी क़ुदरत वाला रब है, **असल यह है की सुनने का काम कानो का होता है,** मगर इस हदीस में कहा गया की, कान वाले (इंसान, जिन्नात) नहीं सुनते, वाह! मतलब कान सिर्फ जरिया है **सुनाता अल्लाह है,** देखो उसकी ताक़त की बेजान को सुना रहा है, और जानदार कान वाले नहीं सुन रहे, हदीस में कहा सब सुनते हैं, सिवाए इंसान और जिन्नात के, तो जनाज़ा जिस दिवार के पास से गुज़रा तो दीवार सुने, जिस दरख़्त के पास से गुज़रा वो दरख़्त सुने, जबकि इनके कान नहीं, तो जब अल्लाह बेकान वालों बेजान वालों को सुना सकता है, तो क़ब्रिस्तान के मुर्दों को सुनाना क्या

उसकी ताक़त से बाहर है, फिर वही आयत की -

ان اللہ یسمع من یشاء (बेशक अल्लाह सुनाता है जिसे चाहे)

सहाबी रसूल **हज़रत सलमान फ़ारसी** का अक़ीदा देखो,

قال لقی سلمان الفارسی عبداللہ بن سلام فقال لہ ان مت قبلی فاخبرنی بما تلقی، وان مت قبلک اخبرتک

(सलमान फ़ारसी ने अब्दुल्लाह बिन सलमान से फ़रमाया अगर तुम मुझसे पहले मरो, तो मुझे खबर देना की वहां क्या पेश आया, अगर मैं तुमसे पहले मरूंगा, तो मैं तुम्हे खबर दूंगा)

सुब्हान अल्लाह **यह है अक़ीदा सहाबी जिसे देख ले वहाबी,** की मरने के बाद खबर भी दी जा रही है, और कहा भी जा रहा है की मैं भी तुम्हे खबर दूंगा, यानि सहाबी भी जानते है की **मरने के बाद सुनने, देखने, समझने की ताक़त ख़तम नहीं होती,** और अगर हो भी जाये तो अल्लाह तो है ना ताक़त वाला, जब बेजान बेकान वालों को सुना सकता है, तो मुर्दों को क्यों नहीं? अल्लाह कहता है - ان اللہ یسمع من یشاء (बेशक अल्लाह सुनाता है जिसे चाहे)

इमाम अहमद (رضي الله عنه) फरमाते हैं, -

ان المیّت اذا وضع عی سریرہ فانہ ینادی یااھلاہ ویاجیراناہ ویا حملۃ سریراہ لاتغرنکم الدنیا کما غرتنی

(बेशक मुर्दा जब चारपाई पर रखा जाता है, पुकारता है ए घर वालो, ए हम सायो ए जनाज़ा उठाने वालों देखो दुन्या तुम्हे धोका ना दे जैसे मुझे दिया)

कहने को तो मुर्दे हैं, पर फिर भी बोल रहे हैं, किया ही क़ुदरत है अल्लाह की, तो जब मुर्दा बोलता नहीं मगर बोल रहा है, तो मुर्दा जो सुनता है और क़ब्रिस्तान का भी सुन रहा है, और तुम्हारे सलाम का जवाब भी दे रहा है, तो **फिर मज़ार वालो का तो कहना ही क्या**

अब मक़सद की बात और दलील पेश कर दूँ, की क़ब्र वाला जवाब देता है या नहीं इसे शरह सुदूर ने **अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास** से रिवायत किया.

مامن احديمر بقبرا خيه المؤمن كان يعرفه فى الدنيا فيسلم عليه الاعرفه ورد عليه السلام

(जो शख्स अपने मुसलमान भाई की क़ब्र पर गुज़रता है, और उसे सलाम करता है, अगर वह उसे दुन्या में पहचानता था, तो अब भी पहचानता और जवाब देता है)

इमाम जलालुद्दीन सुयूती (رضي الله عنه) फरमाते हैं,

मुर्दे ऐसा जवाब नहीं देते जिसे जिंदा सुन लें वरना वो ऐसा जवाब तो देते हैं, जो हमारे सुनने में नहीं आते

तबरानी ने अब्दुल्लाह बिन उमर फ़ारूक़ आज़म से रिवायत किया -हुज़ूर क़ब्र पर रुके और फ़रमाया - والذى نفسى بيده لايسلم عليهم احد الا ردوا الى يوم القيمة

(क़सम उसकी जिसके हाथ में मेरी जान है, क़ियामत तक जो उन पर सलाम करेगा जवाब देंगे,)

अब एक हदीस बुखारी की भी ताकि कुछ लोगो का बुखार उतर जाये.

बुखारी, मुस्लिम, अबू दावूद, में हज़रत अनस बिन मालिक से रिवायत-

واللفظ لمسلم ان الميّت اذا وضع فى قبره انه يسمع خفق نعالهم اذا انصرفوا

(मुर्दा जब क़ब्र में रखा जाता है, और लोग दफ़न करके पलटते हैं, बेशक वह उनके जूते की आवाज़ सुनता है)

तो अब एतराज़ करने वाला ज़रा बताये, आवाज़ जूते की तेज़ होती है या सलाम की, अगर जूते की आहट मुर्दा सुन सकता है, **नहीं नहीं, अल्लाह सूना सकता है**, तो फिर हमारे सलाम को क़ब्र वाले, मज़ार वाले, मदीने वाले, को अल्लाह क्यों नहीं सुना सकता, क्या तुम्हारा इस आयत पर ईमान नहीं,

ان الله يسمع من يشاء (बेशक अल्लाह सुनाता है जिसे चाहे)...
और वह तो मुर्दा है, वरना क़ुरआन हदीस से तो ये बात भी साबित है की, चींटीओं ने हज़रत सुलैमान के लश्कर की आवाज़ काफी दूर से सुन ली थी, तो बस साबित हुआ की मुर्दे का **सुन्ना, देखना, पहचानना, बोलना,** और जाने किया किया,, और मुफ्ती आज़म हिन्द कहते हैं,-

वो कहते ना कहते कुछ, वो करते ना करते कुछ,
ए काश वो सुन लेते मुझ से मेरा अफसाना

और **इमामे अहले सुन्नत** फरमाते हैं (ए वहाबीओ तुम नबी पर सलाम नहीं पढ़ते, जबकि उन पर पत्थर सलाम करते है) और हमारा अक़ीदा तो ये है,

उन पर दुरूद जिन को हजर तक करें सलाम
उन पर सलाम जिन को तहैय्यत शजर की है

(अल्लाह से दुआ है की इसे तहरीर करने वाले, पढ़ने वाले, और आगे बढ़ाने वालो की बेहिसाब मग़फ़िरत करे, और शैतानी वसवसों से ईमान वालो की हिफाज़त करे, और हमें भी सुनाये मदीने की हाज़री का बुलावा, बेशक तू सब सुनाने पर क़ादिर है)

والله تعالیٰ اعلم بالصواب واللہ یرجع الیہ ماب

सुवाल:16 (जिल्द: 3, 1610)

उर्स के माने क्या हैं, उर्स का सबूत क़ुरआन हदीस से इनायत फरमाएं, हो सके तो जवाब तफ्सील से दें, मेहरबानी होगी, रियाज़ बरकाती, नेपाल

जवाब : بسم اللہ الرحمن الرحیم

उर्स के लुग़वी माना है **शादी**, इसिलए अरबी में दुलाह दुल्हन को **उरुस** कहा जाता है, और इस्तिला मशाइख में, औलिया, उलमा, बुज़ुर्गो के **वफ़ात के दिन**

को उर्स कहा जाता है, इसलिए की ये दिन मेहबूब के मिलने का दिन है, हदीसे पाक में भी विसाल पर उरुस से तवील की गई, **मिश्कात** में है-

"नक़िरेन के सुवाल में जब बंदा कामयाब हो जाता है, तो कहते हैं,- **दुल्हन की तरह सो जा जिसको उसके सिवाए प्यारे के, कोई बेदार ना करे,"**

और उर्स नाम है इसाले सवाब का, जिसका ज़िक्र हदीस में मौजूद है, और क़ुरआन में उर्स का सुबूत सूरह कहफ़ में है -(आयत 9 से 26 तक) जिसकी तफ़्सीर पढ़ना मुफीद है - तफ़्सीरे खाज़िन जिल्द:3 सफह:200 में है

बादशाह ने ग़ार (गुफा) के मुहं पर एक मस्जिद बनवा दी, और **सालाना एक दिन मुक़र्रर कर दिया,** की तमाम शहर, वाले इस दिन ईद की तरह ज़्यारत के लिए आया करें

यह मस्जिद अस्हाबे कहफ़ के पास थी, जिससे मालूम चला की मज़ार के पास मस्जिद का होना, आज का नया तरीक़ा नहीं, ना ही साल में दिन मुक़र्रर करके मज़ार पर ज़्यारत को जाना कोई आज का तरीक़ा, मज़ीद तफ्सील के लिए **जा-अलहक** का मुताला करें)..

सुवाल:17 (जिल्द: 3, 1959)

सुवाल में मैं यह लिखना भूल गया, था, की वहाबी यह भी कहता है की, हम क़ुरआन के मायने खुद पढ़ सकते हैं, उसे समझ सकते हैं, खुदा ने दिमाग दिया है तो क्यों, उलामा से पूछने की उनके पास जाने की ज़रूरत क्या है ?

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

जब इब्लीस के घराने का कोई शख्स (वहाबी) यह बात करता है, की हम क़ुरआन हदीस खुद समझ सकते है, हमें आलिम, इमाम की क्या ज़रूरत, तो मुझे यक़ीन है की खुद वहाबीओ के वालिद (इब्लीस) भी अपने बेटों की इन

हरकत पर सख्त नाराज़ होता होगा, और बोलता होगा, की **“ए कमबख़्तो वहाबीओ तुम तो ऐसी बड़ी बड़ी बाते बोल जाते हो जो मैं भी कभी नहीं बोलता, तुम मुझ से भी एक क़दम आगे बढ़ रहे हो, मेरी औलाद हो औलाद रहो, मेरा बाप ना बनो”**

खैर यह इन लोगो के घर की आपसी बात है हमें किसी के घर में मामले में नहीं बोलना चाहिए, अब रहा इसका **जवाब** की क़ुरआन हदीस खुद समझना चाहिए या किसी जानने वाले से पूछ कर अमल करना चाहिए, तो अल्लाह ने इसका जवाब खुद क़ुरआन में दे दिया, **अल्लाह** क़ुरआने पाक में फरमाता है -

(सूरह नहल 16 आयत 43)- فَسْـَٔلُوْٓا اَہْلَ الذِّكْرِ اِنْ كُنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ

“तो ए लोगो इल्म वालों से पूछो, अगर तुम्हे इल्म नहीं”

तफ़्सीर सिरातुल जिनान फि तफ़्सीर-उल-क़ुरआन जिल्द:5 सफह:320 पर है "यह भी मालूम हुआ की जिस मसअले में इल्म ना हो उसके बारे में उलामा की तरफ रुजू करना ज़रूरी है"

हदीस अबू दावूद में है- “जहालत की बीमारी की शिफा दरयाफ्त करने में है”

तफ़्सीर दर्रे मंसूर में एक हदीस नक़ल है की हुज़ूर ने फ़रमाया:-

आलिम के लिए मुनासिब नहीं की वो अपने इल्म पर खामोश रहे, जाहिल के लिए मुनासिब नहीं की वो अपनी जहालत पर खामोश रहे

(यानि जिसे इल्म ना हो वो आलिम से पूछे) यानि खुद क़ुरआन ले कर समझने ना बैठ जाये, वरना इसी क़ुरआन से हिदायत भी पाते हैं और गुमराह भी होते हैं, अल्लाह फरमाता है सूरह बकरा आयत:6 में -

“अल्लाह बहुत को गुमराह करता है और बहुत को हिदायत फरमाता है”

और फिर कितनी हदीस इस पर गवाह है की "**जो इल्म सीखने के लिए घर से निकला अल्लाह की राह में है**" इन हदीसो से तो यही साबित होता है की घर से जब निकला जायेगा जब किसी साहिबे इल्म के पास जाया जायेगा और फिर इल्म का सीखना सुन्नत है एक हदीस में है , सहाबा तो हुज़ूर के पास आते, इसी तरह सहाबा के पास तांबई आते, इसी तरह आज तक ये सिलसिला चालू है, मगर सुवाल में जिस खबीस का ज़िक्र किया गया है उसे ये तो सोचना चाहिए की अगर किसी आलिम के पास इमाम के पास जा कर पढ़ने की ज़रूरत नहीं, तो फिर वहाबीओ ने मदरसे क्यों क़ायम कर लिए, क्या वहाबी अपने मदरसे में **छोले भठूरे बनाना सिखाते हैं**, या क़ुरआन हदीस सिखाते हैं, ? अगर हाँ तो (अजीब जहालत है)किसी ने सही कहा है वहाबी बोलता है सोचता नहीं, अगर किसी आलिम से सीखना ज़रूरी नहीं तो इस हदीस का क्या मतलब हुज़ूर ने फ़रमाया "**इल्म मोमिन का खोया खज़ाना है जहाँ से मिले लेलो**"

والله تعالیٰ أعلمُ بالصواب

सुवाल:18 (जिल्द: 4, 2085)

हिला शरई क्या होता है, ये कहा से साबित है

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

खुद को गुनाह से बचाते हुए. ऐसा रास्ता इख़्तियार करना की काम भी हल हो जाये और शरीअत में कोई गुनाह भी ना हो, हीला कहलाता है जाइज़ काम का हीला जाइज़ है और धोके के लिए बुरा इसका सुबूत क़ुरआन हदीस वगेरा सब से साबित है, क़ुरआन में सूरह: 38 आयत :44 में है-

وَ خُذْ بِيَدِكَ ضِغْثًا فَاضْرِبْ بِّهٖ وَلَا تَحْنَثْ

(और फ़रमाया अपने हाथ में झाड़ू ले कर उससे मार दे)

तफ़्सीर सिरातुल जिनान फि तफ़्सीर उल क़ुरआन जिल्द:8 सफह:408 में है
“हज़रत अय्यूब (عليه السلام) ने क़सम खाई की मैं तंदरुस्त हो कर (एक खता पर) अपनी बीवी को 100 कोड़े मरूंगा, जब सेहतयाब हुए तो अल्लाह ने हुक्म दिया, आप उन्हें झाड़ू मार दें, अपनी क़सम ना तोड़े आपने 100 टीलिओ वाली एक झाड़ू ले कर, अपनी बीवी को एक ही बार मार दिया"
फुकुहा किराम आयत से भी शरई हीले पर इस्तदलाल फरमाते हैं,

फतावा आलमगीरी जिल्द:6 सफह:390 पर है
"जो हीला किसी का हक़ मारने, या उसमे शुबह पैदा करने, या बातिल से फरेब देने के लिए, किया जाये, मकरूह है, और जो हीला इसलिए किया जाये की आदमी हराम से बचे, या हलाल को हासिल करे वह अच्छा है"

जाइज़ हीले की एक मिसाल -अगर किसी के वालिद का इन्तिक़ाल हो गया, और उसके ज़िम्मे पर बहुत सी नमाज़ बाक़ी है, और उनके अपनों में यह चाहता है की उनकी नमाज़ो का सदक़ा दे, तो एक नमाज़ का सदक़ा एक फ़ित्रे की मिसाल होगा, इसी तरह 6 नमाज़ (5 फ़र्ज़ 1 वित्र) का पैसा एक दिन का जोड़ना होगा -
माना एक फितरा = Rs. 40 है
6 नमाज़ की रक़म होगी, 40x6 = Rs. 240
यानी मरहूम की एक दिन की नमाज़ का सदक़ा Rs. 240 देना होगा, इसी तरह एक साल की नमाज़ो का हुआ 240x365 = Rs. 87,600/-
अब अगर 10 साल की नमाज़ क़ज़ा थीं या 20 साल की इसी तरह जोड़ लें,

(दस साल की मिसाल के तोर पर) 87600x10 = Rs.8,76,000/-

यानी अगर किसी के वालिद की दस साल की नमाज़ क़ज़ा है, और उसकी रक़म हुई 8 लाख से ज़्यादा, मगर देने वाले के पास इतनी रक़म नहीं है, तो **शरई हीला कर सकता है** इसका तरीक़ा यह है की, जितनी रक़म देने पर क़ादिर है, उतने पैसे अलग कर लें, मसलन 10 हज़ार दे सकता है, तो वालिद की नमाज़ की तरफ से 10 हज़ार किसी शरई फ़क़ीर को दे दे, यानि हाथ पे रख दे, यानि मालिक कर दे, (जबकि फ़क़ीर को हीले के बारे में समझा दिया गया हो) इस तरह वालिद के 8 लाख से 10 हज़ार कम हो गए, अब वो फ़क़ीर उस रक़म (10 हज़ार) को अपनी ख़ुशी से वापस उसे ही दे दे, अब इस देने वाले पर फिर से 10 हज़ार वापस आ गए, ये लेने वाला मरहूम की तरफ से फिर से वही 10 हज़ार इसी फ़क़ीर के क़ब्ज़े में दे दे इस तरह मरहूम की तरफ से 10 और यानि 20 हज़ार अदा हो गए, इसी तरह कई बार ये लेन-देन कर के उन्ही 10 हज़ार की रक़म से मरहूम की तरफ से लाखो का फितरा दिया जा सकता है, और आखिर में ये रक़म उसी फ़क़ीर को दे, दे इसी को शरई हीला कहा जाता है

मकरूह हीले की एक मिसाल - यानि अगर शोहर बीवी दोनों साहिबे निसाब है (मसलन क़ुरबानी अगर 25 हज़ार वाले पर फ़र्ज़ है) और ये दोनों 30 - 30 हज़ार के मालिक हैं, तो इस तरह दोनों को क़ुरबानी वाजिब हुई, अब अगर शोहर सोचे की एक क़ुरबानी की जाये 2 ना की जाये, और शोहर ने (क़ुरबानी से पहले ही) अपनी रक़म से 10 का मालिक अपनी बीवी को कर दिया, इस तरह शोहर के पास 20 हज़ार बचे और बीवी के पास 40 हो गए, यानि क़ुरबनी अब भी बीवी पर होगी, शोहर पर नहीं, मगर क़ुरबानी से

बचने के लिए खास क़ुरबानी के दिनों में ऐसा करना मकरूह है, हाँ अगर क़ुरबानी और ज़कात के दिनों से पहले ही शोहर खुद मालदार रहना नहीं चाहता, और अपनी ख़ुशी से अपने माल का मालिक किसी को कर दे, तो मकरूह भी नहीं, यानि कोई हर्ज़ नहीं,

وهُو تعالٰی أعلمُ بالصواب

सुवाल:19 (1524, जिल्द: 3)

नमाज़ में रफयदैन क्यों नहीं करनी चाहिए ? ना करने के चंद दलील पेश कीजिये मेरे दोस्त ने 40 हदीस पेश की हैं की करना चाहिए, वो मैं आपको भेज रहा हूँ, जनाब मुफ़्ती एस.एम्.एस. वारसी साहब, सुवाल यह है की क्या हमें रफयदैन करना चाहिए या नहीं

जवाब : بسم اللہ الرحمن الرحیم

हदीस से रफयदैन का करना और ना करना दोनों ही साबित है मगर हुज़ूर ने हमेशा रफयदैन किया हो ये साबित नहीं, पहले करते थे बाद में ज़ाहिरी हयात तक नहीं किया, इसिलए वो अमल मंसूख हो गया, और अगर मान भी लिया जाये की रफयदैन किया जाये, **तो शरीअत की रू से रफयदैन का मसअला महज़ मुस्तहब ठहरेगा,** किया तो ठीक ना किया तो ठीक, मगर रफयदैन पर इस तरह बेहेस करना की जैसे कोई अक़ीदे का मसअला हो, ये भी वहाबी की चाल है ताकि आप असली मक़सद (अक़ीदे) पर बात ना कर सको, अब रहा यह की वहाबी कहता है की हम बुखारी को मानते हैं, हुज़ूर ने जो किया बस वही करो, फिर तो हुज़ूर ने 11 शादियां की हैं, आप क्यों नहीं कर लेते, और तो और किसी हदीस से हुज़ूर का पायजामा पहनना साबित नहीं, तो आप पायजामा क्यों पहनते हो, वो भी इतना ऊँचा अगर कोई

वहाबी कहे की हम वो करते है जो नबी ने किया तो आप उससे बस यह हदीस मांग लो हुज़ूर ने कब पायजामा पहना और सहीह हदीस ही का हवाला हो अगर बुखारी से दे तो और अच्छा, इमाम तहवी ने फ़रमाया-

"अगर वईल ने हुज़ूर को एक बार रफयदैन करते देखा तो हज़रते अब्दुल्लाह इब्ने मसूद ने हुज़ूर को 50 बार रफयदैन करते नहीं देखा"

(इससे मालूम हुआ की अब्दुल्लाह इब्ने मसूद की हदीस क़वी है, क्यूंकि आप हुज़ूर की सोहबत में रहते थे, बड़े फ़क़ीह आलिम थे, और नमाज़ में हुज़ूर के क़रीब खड़े होने वाले थे)

इब्ने आबि शेबा -"हुज़ूर जब नमाज़ शुरू फरमाते थे, तो अपने हाथ उठाते थे, फिर नमाज़ से फारिग होने तक हाथ ना उठाते"

तहवी शरीफ में **अब्दुल्लाह इब्ने मसूद** से रिवायत,

"आप पहली तकबीर में हाथ उठाते थे फिर कभी ना उठाते थे,"

तिर्मिज़ी, अबू दावूद, नसाई, **हज़रते अलकमा** से रिवायत करते हैं, -

"अब्दुल्लाह इब्ने मसूद ने फ़रमाया - क्या मैं तुम्हारे सामने हुज़ूर की नमाज़ ना पढ़ूं, और आपने नमाज़ पढ़ी, और इसमें सिवाए तक्बीरे तहरीमा के कभी हाथ ना उठाये"

इससे पता चला की हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद ने सहाबा के मजमे में नमाज़ पढ़ी, और सिवा तकबीर के हाथ ना उठे, तो किसी ने मना ना किया, सारे सहाबा की खामोशी इस बात की दलील है, की बाद में रफयदैन हुज़ूर ने नहीं किया, वरना सारे सहाबा फरमाते की इब्ने मसूद आपकी नमाज़ ग़लत है ये हुज़ूर की नमाज़ नहीं

दलील और भी है मगर वक़्त की तंगी है, और जवाब को इख़्तिताम पर ले जाते हुए, साइल से अर्ज़ करना चाहता हूँ की, रफयदैन ना करना बड़े बड़े

सहाबा का अमल था, और पहले हज़रत उमर भी रफयदैन करते थे मगर जब आपको रफयदैन मंसूख होने का इल्म हुआ तो आपने रफयदैन करना बंद कर दिया, लिहाज़ा यह कहना की हज़रत उमर से रफयदैन साबित है ये बात तो सही है मगर हमेशा का अमल रहा हो ये साबित नहीं और बड़े बड़े सहाबा और बुज़ुर्गो का यही मसलक है की रफयदैन अब नहीं किया जायेगा, और फिर साइल हनफ़ी है जैसा की सुवाल में बयान हुआ, तो फिर हनफ़ी को वहाबी की बात मानने की ज़रूरत क्या ? क्या ग़रीब नवाज़ ने रफयदैन किया, क्या जितने वली हनफ़ी गुज़रे उन सबने रफयदैन किया तो जब इन्होने आंखे बंद करके इमामे आज़म की बात को मान लिया और सारी ज़िन्दगी रफयदैन नहीं किया, तो क्या इन्हे हदीस का इल्म नहीं था, या ये हदीस के खिलाफ नमाज़ पढ़ के वली बन गए, क्या आज के लोग इनसे ज़्यादा बुलंद रुतबा हो गए,? अगर नहीं तो हनफ़ी मुक़्तदी को चाहिए की क़ुरआन की इस आयत पर अमल करते हुए इमामे आज़म के मसलक पर ही अमल करे अल्लाह फरमाता है - "ए लोगो इल्म वालो से पूछो अगर तुम्हे इल्म नहीं" और इल्म वाले इमामे आज़म ने बता दिया की रफ़ायदें अब नहीं तो बस नहीं

"एक देखने वाले का कहा मान लिया है
बिन देखे मैंने तुझको खुदा जान लिया है

والله سبحانه وتعالی أعلمُ بالصواب والله يرجع اليہ ماب

सुवाल:20 (647, जिल्द: 2)

क़ब्रो पर फूल चढ़ाना कैसा क्या सहाबा ने ऐसा किया है बराए करम दलील के साथ जवाब दे

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

क़ब्रो पर फूल डालना जाइज़ है और वो काम जो सहाबा या रसूल ने नहीं किये हराम नहीं हो जाते किसी भी काम के जाइज़ होने के लिए इतना काफी है वो शरीअत में मना ना हो, फिर चाहे उसे सहाबा ने किया हो या नहीं, और देओबंदियो की यह चाल की क़ब्र पर क्या फूल सहाबा ने डाले है, बातिल है, क्योंकि फ़िक़्ह हनफ़ी की वो किताबे जो यह भी पढ़ते है उनमे फूल डालने के जवाज़ के फतवे मौजूद हैं, वरना सहाबा ने तो शादी कार्ड भी नहीं छपवाए मगर आज जब देवबंदी शादी करता है तो वो क्यों छपवाता है और ऐसे हज़ारो काम जो इस दौर में ऐसे है जो सहाबा ने नहीं किये मगर वहाबी करता है जैसे हिंदी बोलते है, किसी सहाबा ने हिंदी नहीं बोली होगी, और जो ये क़ुरआन वहाबी पढता है ये भी सहाबा ने नहीं पढ़ा ये किताबी प्रिटिंग शक्ल भी उस वक़्त नहीं थी, मुसलमान के लिए इतना काफी है की जो सुन्नी उलामा ने ब्यान किया उसे हक़ जाने और उसी पर अमल करे, शरीअत में आलिम से बड़ कर अपनी अक़ल ना लगाए, अल्लाह फरमाता है **"तो ए लोगो इल्म वालो से पूछो अगर तुम्हे इल्म नहीं"** किसी भी आयत में ये नहीं फ़रमाया की "ए लोगो खुद अक़ल लगा लिया करो, और ना ये फ़रमाया की बस वही जाइज़ है जो सहाबा ने किया बाकी सब हराम"

(अल्लाह, इब्लीस और उसकी औलाद से सुन्नी बरेलवियो को अमान में रखे)

आलमगीरी जिल्द: 5 सफह:351 पर है:-وضع الورد والرياحين على القبورحسن

(क़ब्रों पर गुलाब और फूलो का रखना अच्छा है)

रद्दुल मोह्तार में है انہ مادام رطبایسبح فیؤنس المیت وتنزل بذکرہ الرحمۃ

(फूल जब तक तर रहे तस्बीह करते रहते है, जिससे मय्यित को उन्स हासिल होता है और उसके ज़िक्र से रहमत नाज़िल होती है)

फतावा रज़विया जिल्द:9 सफह: 106 पर है

“फूलों की चादर बाला ए कफ़न डालने में असलन शरअन कोई हर्ज़ नहीं, बल्कि नीयते हसन से हसन है, जैसे क़ब्रो पर फूल डालना कि वह जब तक तर है, तस्बीह करते रहते हैं उनसे मय्यित का दिल बहलता है और रहमत उतरती है"

फतावा रज़विया जिल्द:5 सफह: 431 पर है

“और खुद अगर कोई दलील ख़ास ना होती, तो मना पर शरा से दलील ना होना, जवाज़ के लिए दलील काफी थी,” जो (शरीअत के किसी काम को) नाजाइज़ कहे दलील देना उसके ज़िम्मे है"

وهُو تعالٰی أعلمُ بالصواب

सुवाल:21 (1245, जिल्द: 2)

हज़रत सरकार के ज़माने में औरत और मर्द एक साथ नमाज़ पढ़ते थे अब क्यों नहीं,

जवाब : بسم اللہ الرحمن الرحیم

सरकार में वक़्त में औरतें मस्जिद जाया करती थीं, मगर बाद में फ़ितने के खौफ में दौरे फ़ारूक़ी में मना कर दिया गया और हज़रत आयेशा ने फ़रमाया

لوا ن رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم رأی من النساء مارأینا لمنعھن من المسجد کما منعت بنواسرائیل نسائھا ١ ؎ رواہ احمد وبخاری ومسلم

(हुज़ूर हमारे ज़माने में औरतों को मुलाहज़ा फरमाते तो उन्हें मस्जिद जाने से मना करते जैसे बनी इस्राइल ने अपनी औरतो को मना कर दिया था)

फत्हुल क़दीर में है -

عمم المتاخرون المنع العجائز والشواب فی الصلوات کلھا لغلبۃ الفساد فی سائر الاوقات

(फसाद के ग़लबे की वजह से तमाम वक़्तों की नमाज़ों में उमूमन बूढी और जवान औरतों का निकलना मुतखरीन उलामा ने मना फ़रमाया है)

फतावा रज़विया जिल्द:14 सफह: 551 पर है

"जब और फसाद फैला तो उलामा ने जवान व ग़ैरे जवान किसी के लिए (हाज़री ए मस्जिद की) इजाज़त न रखी"

अब इस बात से आप खुद ही अंदाज़ा लगा सकते हो की जब सहाबा के वक़्त में फसाद का खौफ हुआ, और उन्होंने मस्जिद की हाज़री औरतों के लिए मना कर दी, तो आज का वक़्त कैसा है **यह मुझे आपको बताने की ज़रूरत नहीं,** आप खुद गौर करें की आज कल मस्जिद में औरतें और लड़किया नमाज़ को जाएँगी, तो हाल किया होगा, मर्दो का जमघट मस्जिदों के बाहर होगा, इमाम से जवान लड़के ज़्यादा मेल जोल रखने लगेंगें, दिन भर मस्जिद में रहेंगे, बाकी आप खुद समझदार हो, ये दौर दौरे रसूल से बेहतर नहीं बुरे से बुरा-तर है, और हदीस में है-

"गुज़रा हुआ कल आज से बेहतर था, और आज का दिन आने वाले कल से बेहतर है, ता क़ियामत इसी तरह होगा"

अब इस हदीस से और साफ़ हो गया की पहले का गुज़रा हुआ दिन अच्छा, और आने वाला और खराब होगा, लिहाज़ा सहाबा ने जो किया अच्छा किया, और उलामा ने बाकी रखा तो और अच्छा किया,

हुज़ूर ने फ़रमाया انہ سیحدث بعدی اشیاء وان من احبھا الی لما احدث عمر

मेरे बाद बहुत सी चीज़े ईजाद होंगी उनमे से मुझे वो सबसे ज़्यादा पसंद है, जो उमर ईजाद करें,

واللہ سبحانہ وتعالی أعلمُ بالصواب واللہ یرجع الیہ ماٰب

सुवाल:22 (1187, जिल्द: 2)

ऐसी हदीस पेश करें हवाले के साथ जिससे 20 रकअत तरावीह साबित हो

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

तरावीह 20 रकअत का होना सुन्नते मौअक्कदा है, जिसकी दलील और तफ्सील किताब **"जा-अल-हक़्क़"** में देखि जाये, और इसी पर हज़रत उमर व दीगर सहाबा का अमल रहा, बल्कि हज़रत उमर ने इसके लिए बाक़ायदा जमाअत का इंतिज़ाम भी किया, और हदीस में हुज़ूर ने फ़रमाया

انہ سیحدث بعدی اشیاء وان من احبھا الی لما احدث عمر

“मेरे बाद बहुत से चीज़े ईजाद होंगी उनमे से मुझे वो सबसे ज़्यादा पसंद है, जो उमर ईजाद करें,”

और हदीस में हुज़ूर ने फ़रमाया- عليكم بسنتی وسنۃ الخلفاء الراشدين

(फ़रमाया तुम पर लाज़िम करता हूँ, अपनी सुन्नत को अपने खुलफाए राशिदीन की सुन्नत को)

وھُو تعالٰی أعلمُ بالصواب

सुवाल:23 (1334, जिल्द: 2)

यह बताएं की नमाज़ से पहले तकबीर जो होती है, तकबीर से पहले खड़े होना चाहिए, या बीच में खड़े होना चाहिए, मैंने सुना है की हुज़ूर तकबीर से पहले ही खड़े होते थे, और एक दो बार बीमारी की वजह से तकबीर के बीच में खड़े हुए तो कौन सा तरीक़ा सही है, और क्या तकबीर से पहले खड़े होने से नमाज़ हो जाएगी, हो सके तो हवाले के साथ जवाब दें,

जवाब : بسم اللہ الرحمن الرحیم

तरीक़ा सही यही है जो सदीओ से उलामा की मोतबर क़ुतुब से साबित है, की जब मुकब्बिर "حی علی الفلاح" कहे तो इमाम और मुक़्तदी दोनों को खड़ा होना चाहिए, और मुक़्तदी को पहले से खड़े रहना मकरूह है, **मगर नमाज़ हो जाएगी,**

फतावा आलमगीरी जिल्द:1 सफह:75 पर है

اذادخل الرجل عندالاقامۃ یکرہ لہ الانتظار قائما ولکن یقعد ثم یقوم اذابلغ المؤذن قولہ حی علی الفلاح

(अगर कोई तकबीर के वक़्त आये तो बैठ जाये, क्यूंकि खड़े हो कर तकबीर सुनना मकरूह है, फिर जब मोअज़्ज़िन "حی علی الفلاح" कहे तो खड़ा हो,

फतावा रज़विया जिल्द:5 सफह: 420 पर है

तकबीर खड़े हो कर सुनना मकरूह है, यहाँ तक की उलामा ने फ़रमाया अगर तकबीर हो रही है, और मस्जिद में आये तो (फ़ौरन) बैठ जाये, और जब मुकब्बिर "حی علی الفلاح" पर पहुंचे उस वक़्त सब खड़े हो जाएँ

फतावा रज़विया जिल्द:5 सफह: 422 पर है

"इमाम के लिए इसमें कोई खास हुक्म नहीं, मुक़्तदी को हुक्म है की तकबीर बैठ कर सुने "حی علی الفلاح" पर खड़े हो, खड़े खड़े तकबीर सुनना मकरूह है"

واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

सुवाल:24 (1604, जिल्द: 3)

हज़रत नबी पाक ने एक हदीस बयान की है की मुस्लमान में 72 फ़िरक़े होंगे, और उनमे से एक हक़ पर होगा, क्या यह हदीस सही है, हवाला मिल सकता

है, कहा पर इसका ज़िक्र है, और ज़ैद कहता है की, यह बात जो कही जाती है की, हुज़ूर के सदक़े में सारी दुन्या बनी यह ग़लत है,

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

इसे तिर्मिज़ी ने अपनी सुनन में **अबु हुरैरा** से रिवायत

"यहूदी 71 या 72 फ़िरक़ों में बट गए ईसाई भी इसी तरह, लेकिन मेरी उम्मत 73 फ़िरक़ों में तक़सीम हो जाएगी,"

इसी तरह मिश्क़ात में भी नक़ल किया और रिवायत हज़रत **उमर** से और मीरात शरह मिश्कात जिल्द:1 सफ्ह:153 पर है

“यक़ीनन बनी इसराइल 72 फ़िरक़ों में बट गए, और मेरी उम्मत 73 फ़िरक़ों में बट जाएगी, सिवाय एक मिल्लत के सभी दोज़खी, लोगों ने पूछा या रसूलल्लाह वह कौन सा फ़िरक़ा है, फ़रमाया जिस पर मैं और मेरे सहाबा हैं”

और ये कोई पहली बात नहीं की वहाबी ने इस पर एतराज़ किया हो, ये उनका काम है हमेशा से, और हमें हमारे मोतबर उलामा ने जो पहुंचाया वो क़ाबिले एतबार है- तारीखे दमिश्क में है - لولاک لما خلقت الدنیا

(अगर आप ना होते तो मैं दुन्या को ना बनाता)

अल-मवाहिब में है – (अल्लाह ने हज़रत आदम से फ़रमाया)

لولا محمد ماخلقتک ولا ارضا ولا سماء

(अगर मुहम्मद ना होते तो मैं तुम्हे बनाता ना ज़मीनो आसमान को)

अल-मवाहिब में है -

ان اللہ تعالٰی قد خلق قبل الاشیاء نور نبیک من نورہ - رواہ عبدالرزاق ـــونحوہ عندالبیہقی

(ए जाबिर ! बेशक अल्लाह ने तमाम अश्याँ से पहले तेरे नबी का नूर अपने नूर से पैदा किया,)
और इसी को इमाम बहैकि ने भी रिवायत किया

फतावा रज़विया जिल्द:30 सफह: 667 पर है-
"तो सारा जहाँ ज़ाते इलाही से बा-वास्ता हुज़ूर साहिबे लौलाक, (صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم) पैदा हुए, यानि हुज़ूर के वास्ते हज़ूर के सदक़े हुज़ूर के तुफैल में"
واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم-

सुवाल:25 (1835, जिल्द: 3)
क्या फातिहा दिलाना शिर्क है ?

जवाब : بسم اللہ الرحمن الرحیم
फातिहा शिर्क नहीं एक क़िस्म का इसाले सवाब है, यानि आप अपने किसी भी नेक आमाल का सवाब किसी दूसरे मुसलमान (ज़िंदा या मुर्दा) को भेज सकते हो, **इसी का नाम फातिहा है,** और इसी को आम ज़ुबान में नियाज़ कह दिया जाता है, और ये हदीस से साबित है, और फिर आज अगर कोई खाना आगे रख कर, क़ुरआन पढ़े तो इसमें शिर्क कहाँ से आ गया, शिर्क तो जब होगा जब **फ़क़त अल्लाह के लिए फातिहा दी जाती हो** और कोई गैरुल्लाह के लिए दे दे, जैसे की इबादत वगेरा। लोग मस्जिद मदरसों में भी तो अपने मरहूमों के नाम से चंदा देते है, **ये भी एक इसाले सवाब है** और इसी को फातिहा कह दीजिये, क्या ये शिर्क है, और जो शिर्क कहता है वो भी ये करता होगा, फ़क़ीर को पैसे देना, ग़रीब को खाना खिलाना कितने ही ऐसे काम हैं, जो मुसलमान अपने रिश्तेदारों के नाम से करता है, सब इसाले सवाब है, और यही फातिहा

*हदीस शुएबुल ईमान- जब तुम में से कोई कुछ खैरात करे, तो चाहिए उसे की, (कुछ) अपने माँ बाप की तरफ से करे, इसका सवाब उन्हें मिलेगा, और इसके सवाब में भी कोई कमी ना होगी,

*हदीस शुएबुल ईमान - मुर्दे का हाल क़ब्र में डूबते हुए इंसान की तरह है, वो शिद्दत से इन्तिज़ार करता है की, कोई बाप या माँ या भाई या दोस्त की दुआ, उसको पहुंचे, और जब उसे दुआ पहुँचती है तो वो उसके लिए दुन्या और जो कुछ उसमे है इससे बेहतर होती है

* एज़न -जब कोई शख्स मय्यित को इसाले सवाब करता है, तो जिब्राइल उसे नूरानी तबाक में रख कर क़बर के किनारे खड़े हो जाते हैं, और कहते हैं- "ए क़बर वाले यह तोहफा तेरे घर वालों ने भेजा है क़ुबूल कर," और यह सुन कर वो खुश होता है, और उसके पडोसी अपनी महरूमी पर ग़मगीन

*कश्फ़ अल-खफा - जो क़ब्रिस्तान में 11 बार सूरह इखलास पढ़ कर मुर्दो को इसका सवाब पहुंचाए तो मुर्दो के सवाब के बराबर भेजने वाले को भी सवाब मिलेगा,

*सुनन अबु दावूद - हज़रत साद ने अर्ज़ की, मेरी माँ का इन्तिक़ाल हो गया, कौन सा सदक़ा अफ़ज़ल है, फ़रमाया पानी, उन्होंने एक कुंवा खुदवाया और कहा ये उम्मे साद के लिए है,

واللہ تعالٰی اعلم

सुवाल:26 (2245, जिल्द: 4)

हज़रत क्या इसाले सवाब के लिए ज़रूरी है की अच्छा पकवान ही बना कर ग़रीबों मिस्कीनों को खिलाया जाये, तो ही उसका सवाब मुर्दो को पहुंचेगा क्या उतना पैसा जितने में बिरयानी बनवानी हो निकाल कर ना दे दिया

जाये ग़रीब को या किसी ज़रूरत मंद इंसान को तो क्या ये सही रहेगा, क्यूंकि आज के इस दौर के हिसाब से कोई ऐसा ग़रीब नहीं है जो ये अच्छे पकवान ना खाया हो, क्या ये ज़रूरी है की हम ढेर सारे फ़क़ीरों को बुला कर ही खिलाये, वही रक़म किसी एक को अगर दे दिया जाये, तो क्या उससे मुर्दों को फायदा नहीं होगा, रहनुमाई फरमाएं

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

आपने जो सूरते हाल सवाल में ब्यान फ़रमाई बदमज़हब से मुशाबिहत रखती है वो भी फातिहा को बंद करवाने के लिए ये तरीके दिलो में डालते हैं, की आप पैसे दे दो सवाब तो जायेगा ही, और असल काम ये करते हैं की घरों से **मामुलाते अहले सुन्नत के मुताबिक़ तरीक़ए फातिहा को ख़तम किया जाये,** जवाब यह है की अहले सुन्नत के नज़दीक हर अमले सालेह का सवाब मुस्लमान को इसाल किया जा सकता है, अपने जो कहा की पकवान न पकवायें पैसे ग़रीबों को देदे, तो **सूरत ये भी जाइज़ है सवाब इसमें भी होगा.** मगर याद रखना चाहिए की पैसे दे देने से फ़क़त एक फ़क़ीर को देने का सवाब होगा, और अगर आप उस रक़म से घर में कुछ पकवाये तो आपकी **मेहनत और वक़्त पर भी सवाब मिलेगा** , और पैसा एक ही हाजत पूरी करेगा और खाना 50 का पेट भरेगा जब आपका खाना 50 लोग खा कर दुआ करेंगे तो सवाब ज़्यादा होगा या एक पैसा देने से, क़ुरआन में नहीं पढ़ा की अल्लाह फरमाता है - **"दुश्वारी के साथ आसानी है, दुश्वारी के साथ आसानी है"** और हदीस कहती है **"सवाब उस अमल में ज़्यादा है जिसमे मशक़्क़त ज़्यादा है"** अब आप गौर कर लो कि फातिहा बंद करके मशक़्क़त बंद करी तो सवाब बढ़ेगा या कम होगा,

दूसरी अहम् बात – आज दौर पुरफ़ितन है अहले सुन्नत की निशानिया ख़तम किये जाने का ख़याल लोगो के दिलो में है, सोचो अगर आपने यही तरीक़ा अपनाया की हर बार पैसे फ़क़ीर को दे दिए, तो आपके बच्चे यही देखेंगे और सीखेंगे, **फातिहा क्या होती है उन्हें खबर भी ना होगी**, वो भी इसी तरीके पर अमल करेंगे, लिहाज़ा **अगर आपको अपने घर में सुन्नियत ज़िंदा रखनी है** तो फातिहा का तरीक़ा घर में चालू रखो, फातिहा के वक़्त बच्चो को भी हाज़िर रखो, ताकि वो देखे और सीखे की हमारे घर, और बाप दादा का क्या तरीकेकार था, और आपके मरने के बाद गुमराह होने से बच जाएँ, वरना कल को नियाज़ फातिहा उन्हें नई चीज़ लगेगी, क्यूंकि आप तो पैसे देने का रिवाज़ शुरू कर चुके होंगे,

मैं यह नहीं कहता की पैसे देना ग़लत है, मक़सद यह है की अगर अपने घर में खाना पकने का मसअला है तो आप बाजार से **मिठाई या कुछ भी ला कर फातिहा दे दें** मगर घर में ये सिलसिला चालू रखे, और कुछ पैसे भी दे देंगे तो हर्ज़ नहीं, और आपके ज़हन में जो ये बात है की ग़रीब कहा से लाऊँ तो आपको अर्ज़ कर दूँ की इसाले सवाब की फातिहा में ग़रीब को ढूंढने की ज़रूरत नहीं, हर **नफिल खाना अमीर भी खा सकता है, पडोसी भी, रिश्तेदार भी, और खुद आपके घर वाले भी,** लिहाज़ा आप खाना किसी को भी खिला दें, इस वस्वसे में ना आएं, की ग़रीब नहीं मिलता, चाहे आपका खाना खाने वाला अपने घर में कैसा ही अच्छा खाना खता हो इससे भी फ़र्क़ नहीं पड़ता आपको सवाब ज़रूर मिलेगा,

والله سبحانه وتعالى أعلمُ بالصواب

सुवाल:27 (2269, जिल्द: 4)

हज़रत ऐसा कहा जाता है की हुज़ूर अलैहिस्सलाम जहाँ भी कोई महफ़िल होती है या कोई मुहब्बत से पुकारे तो वहा आप तशरीफ़ लाते हैं, तो क्या यह आना क़ुरआन हदीस से साबित है

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

मसअला यह नहीं है की जहाँ पुकारे वहां तशरीफ़ ले आते हैं, अक़ीदह यह है की **जिस महफ़िल में आना चाहें आ सकते हैं,** नबी को दूरी नज़दीकी रुकावट नहीं होती, दुन्या उनके सामने ऐसी है जैसे, हथेली पर तिल का दाना.

क़ुरआन सूरह अहज़ाब आयत 45 में इरशाद है

"ए ग़ैब की खबरे बताने वाले (नबी) बेशक हमने तुम्हे भेजा हाज़िर नाज़िर और खुश खबरी देता और डर सुनाता"

तफ़्सीर सिरातुल जिनान फि तफ़्सीर उल क़ुरआन जिल्द:8 सफह:57 पर है

"अहले सुन्नत का अक़ीदह है की सरकारे दो आलम अल्लाह की अता से हाज़िर नाज़िर हैं, और यह अक़ीदा आयात, अहदीस और बुज़ुर्गाने दीन के अक़वाल से साबित है"

कंज़ुल उम्माल जिल्द: 6 सफह: 189 पर है

हज़रते अब्दुल्लाह बिन उमर से रिवायत फ़रमाया हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने - अल्लाह ने सारी दुन्या मेरे सामने कर दी है लिहाज़ा मैं सारी दुन्या को और जो कुछ उसमे क़ियामत तक होने वाला है, सब का सब यूँ देख रहा हूँ, जैसे इस हाथ की हथेली को देख रहा हूँ,

अख़बारूल अखयार में है -
“शेख अब्दुल हक़ मुहद्दिसे देहलवी (رضي الله عنه) फरमाते हैं
अहले हक़ में से इस मसअले में किसी का भी इख्तिलाफ नहीं की हुज़ूर अपनी हक़ीक़ी ज़िन्दगी मुबारकरा के साथ दाइम और बाक़ी हैं, और उम्मत के अहवाल पर हाज़िर ओ नाज़िर हैं, और हक़ीक़त के तलबगारों को और उन हज़रात को जो आपकी तरफ मुतवज्जेह हैं, उनको फैज़ भी पहुंचाते हैं, और उनकी तरबियत भी फरमाते हैं,
शेख अब्दुल हक़ मुहद्दिसे देहलवी (رضي الله عنه) तकमीलुल ईमान में फरमाते हैं
“चार औलिया क़बर में ज़िंदा है और मशाइखे किराम फरमाते हैं, मैंने औलिया अल्लाह में चार ऐसे बुज़ुर्गो को देखा है जो अपनी क़बरो में भी तसर्रुफ़ करते हैं, उनका तसर्रुफ़ उनकी ज़िन्दगी की हालत से किसी तरह कम नहीं होता”
इससे मालूम हुआ की बाज़ औलिया को भी अल्लाह ने वो क़ुव्वत दी है की जहाँ आना जाना चाहे आ जा सकते हैं, और ये बात देओबंदी की किताबो से भी साबित है देखें, फतावा दारुल उलूम ज़करिया जिल्द:1 सफह:54
والله تعالٰی أعلمُ بالصواب

सुवाल:28 (2311, जिल्द: 4)
वारसी साहब हम मेराज 27 रजब को क्यों मनाते है, हलाकि ये तारीख हदीसो में मौजूद नहीं है कुछ उलामा कहते है की 15 ज़ुलहिज्जा को मेराज की रात हो सकती है और कुछ कहते है की रजब में है या नहीं किसी को नहीं पता तो मुफ़्ती साहब इसका जवाब इनायत फरमाएं

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم
क़ुरआन में सूरह बनी इस्राइल और आयत 1 में है-
سُبْحٰنَ الَّذِیْۤ اَسْرٰى بِعَبْدِهٖ لَیْلًا مِّنَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اِلَى الْمَسْجِدِ الْاَقْصَا
(पाकी है उसे जो अपने बन्दे को रातो रात ले गया मस्जिदे हराम से मस्जिदे अक़्सा तक)
तफ़्सीर सिरातुल जिनान फि तफ़्सीर उल क़ुरआन जिल्द:5 सफह:414 पर है
“नुबूवत के 12वी साल हुज़ूर मेराज से नवाज़े गए, अलबत्ता महीने के बारे में इख्तिलाफ है मगर ज़्यादा मशहूर यह है की 27 रजब को मेराज हुई”
इब्ने असाकिर में है
"जिसने रजब की 27 का रोज़ा रखा उसके लिए 60 महीनो के रोज़ों का सवाब लिखा जाता है यह पहला दिन हैं जिसमे जिब्राइल हुज़ूर के लिए पैगामे इलाही ले कर हाज़िर हुए और इसी माह में हुज़ूर को मेराज शरीफ का शरफ़ हासिल हुआ

अल-मवाहिबुल लदुनिया जिल्द: 1 सफाह: 355 पर है
“इमाम रफाइ फरमाते है - मेराज का वाक़िया रजब के महीने में हुआ और मुहद्दिस अब्दुल गनी ने रजब की 27 भी मुताईन कर दी, अल्लामा ज़रक़ानी तहरीर फातमाते हैं, लोगो का इसी (27) पर अमल है और बाज़ मोअर्रिख़ीन के नज़दीक यह सबसे ज़्यादा क़वी रिवायत है”
अब रहा यह की जब तेह नहीं है तो मुस्लमान 27 क्यों मनाते है? इसी रात इबादत क्यों करते हैं, तो ये वहबीओ की पैदाइशी आदत है जो अपने बुज़ुर्ग (इब्लीस) से सीखी है, की हुज़ूर की मुहब्बत में जब ख़ुशी मनाई जाये इबादत की जाए तो उससे रोका जायेगा, अगर मान लो की 27 रजब वो तारीख नहीं

तो सवाल है यह की अगर मुस्लमान उसे 27 रजब समझ कर नमाज़, नियाज़, इबादत का एहतिमाम करते हैं, तो इसमें हर्ज़ ही क्या है कोन सा इस रात शराब हलाल की जाती है जिस पर एतराज़ हो, **अब्दुलाह बिन मसऊद** (رضي الله عنه) से मरवी- رَاٰهُ الْمُسْلِمُوْنَ حَسَنًا فَهُوَ عِنْدَ اللّٰهِ حَسَنٌ ।

(तमाम मुसलमान जिस चीज़ को अच्छा मान लें वह अल्लाह के नज़दीक भी अच्छी है,) क्योंकि हदीस में हुज़ूर ने फ़रमाया - لَا يَجْتَمِعُ اُمَّتِىْ عَلَى الضَّلَالَةِ (मेरी उम्मत गुमराही पर जमा नहीं होगी)

وهُو تعالىٰ أعلمُ بالصواب

सुवाल:29 (2355, जिल्द: 4)

रजब महीने में 22 तारीख को इमाम जाफर सादिक़ की नियाज़ क्यों कराई जाती है क्यूंकि रजब महीने में ना उनकी पैदाइश की तारीख है ना उनकी वफ़ात की तो इस महीने में उनसे ये निस्बत कहा से साबित है और 22 रजब को तो हज़रते मुआविया की वफ़ात का दिन है ?

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

सुन्निओं को इस बात का इल्म होना चाहिए की कूंडे इसाले सवाब है और इसाले सवाब हर महीने में जाइज़ है, तो अगर रजब में उन्हें सवाब भेजा जायेगा तो कौन सी आफत आ गई, वरना एतराज़ करने वाले से आप ही पूछ लो की, इमाम जाफर का कौन सा महीना है उस महीने में भी सवाब भेज देंगे, और अगर वो कहता है की उनका महीना कही से साबित नहीं, तो आप कहना जिसका महीना तय नहीं होता उसका सवाब रजब में रोक दिया जाता है क्या? बात इतनी सी है की रजब उनका महीना हो या ना हो सवाब तो

365 दिन ही किया जा सकता है, और वैसे भी इमाम जाफर के विसाल की तारीख 15 रजब है न की 22 और अगर 22 रजब को इमाम जाफर की नियाज़ होगी तो भी उन्हें ही सवाब जायेगा, चाहे वो दिन हज़रते मुआविया ही का ही क्यों न हो, और अगर मान लो की वो दिन हज़रते मुआविया का है तो उनसे भी अहले सुन्नत को कौन से दुश्मनी है, हम तो आम फातिहा में भी सबको शामिल करते हैं, तो अगर मुस्लमान माहे रजब की 22 को इमाम जाफर की फातिहा करे तो हर्ज़ कैसा ? **अब्दुलाह बिन मसऊद** (رضي الله عنه) से मरवी- رَاٰہُ الْمُسْلِمُوْنَ حَسَنًا فَھُوَ عِنْدَ اللّٰہِ حَسَنٌ ا

(तमाम मुसलमान जिस चीज़ को अच्छा मान लें वह अल्लाह के नज़दीक भी अच्छी है,) क्योंकि हदीस में हुज़ूर ने फ़रमाया - لَا يَجْتَمِعُ أُمَّتِى عَلَى الضَّلَالَةِ

(मेरी उम्मत गुमराही पर जमा नहीं होगी)

फतावा फ़क़ीह मिल्लत जिल्द:2 सफह: 65 पर है

22 रजब के बजाये इमाम जाफर की नियाज़ 15 रजब को करें

واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم-

सुवाल:30 (1679, जिल्द: 3)

सय्यिदों का मर्तबा बड़ा क्यों है? और सिर्फ अहले सुन्नत वाले ही उनका मर्तबा बड़ा कहते है क्यों जबकि वहाबी के वहां सब बराबर हैं, जबकि हुज़ूर ने कहा तुम एक दुसरे के भाई हो कोई गोरा कोई काला नहीं, तो हम सय्यिदों को क्यों बढ़ावा देते हैं,

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

जो हदीस आपने ब्यान फ़रमाई बेशक हक़ है मगर अहले बैत की फ़ज़ीलत पर क़ुरआनी आयात व अहादीस कसरत से मौजूद है, अगर वहाबी इतना ही हुज़ूर की बात पर अमल करने वाले हैं तो हुज़ूर ने ये भी फ़रमाया की मेरी ख्वाइश है की सूरह यासीन मेरी उम्मत के सीने में हो तो इस हदीस पर अमल करते हुए हर वहाबी ने सूरह यासीन हिफ़्ज़ कर ली.? इसी तरह वो गोर काले वाले हदीस, फ़ज़ाइल की तमाम हदीस का रद्द नहीं करती, अब फ़ज़ाइले अहले बैत

क़ुरआन में अल्लाह फरमाता है सूरह शूरा आयत 25 में

"तुम से इस (तबलीग़े रिसालतो दीन) पर कुछ उजरत नहीं मांगता मगर क़राबत (अहले बैत) की मुहब्बत"

और फरमाता है अल्लाह सूरह अहज़ाब आयत 33 में

"अल्लाह तो यही चाहता है ए नबी के घर वालो की तुमसे हर नापाकी दूर फरमा दे, और तुम्हे पाक करके खूब सुथरा कर दे"

तफ़्सीर खज़ाइनुल इरफ़ान में है- “इस आयत से अहले बैत की फ़ज़ीलत साबित होती है”

मिश्कात शरीफ में है

“6 आदमी वह है जिन पर मैंने और अल्लाह ने लानत की (उनमे से एक यह भी है) जो मेरी अहले बैत के मुताबिक़ उन बातो को हलाल समझे जिन्हे अल्लाह ने उन पर हराम किया“

इस हदीस की शरह मिरात जिल्द:1 सफह:97 पर यूँ है

“यानि हुज़ूर की औलाद की बेहुरमती, उन पर ज़ुल्म और सितम करने वाले पर इतरत रसूल औलादे फातिमा है उनकी ताज़ीम दीन में दाखिल है, जब

क़ुर्बे काबा की वजह से हरम की ज़मीन का एहतराम है तो क़ुर्बे मुस्तफा की वजह से सादात का एहतराम यक़ीनन लाज़िम है"

फतावा रज़विया जिल्द: 22 सफह: 420 पर है
"सादात किराम की ताज़ीम फ़र्ज़ है और उनकी तौहीन हराम"
الاستخفاف بالاشراف والعلماء كفر (सादात किराम व उलामा की तहक़ीर कुफ्र है)

इमाम तबरानी ने हदीस नक़ल की
हुज़ूर ने फ़रमाया – "सबसे पहले मैं जिस गिरोह की शफ़ाअत करूँगा वो मेरी अहले बैत हैं"

कंज़ुल उम्मत में है - اول من يرد على الحوض اهل بيتي ومن احبنى من امتى
"सबसे पहले मेरे पास हौज़े कौसर पर आने वाले मेरी अहले बैत हैं, और मेरी उम्मत से मेरे चाहने वाले"
इमाम बहैकि ने इसे हज़रत अली से कुछ अल्फ़ाज़ की ज़्यादती के साथ रिवायत किया, और कंज़ुल उम्माल में है –
من لم يعرف حق عترتى فلاحدى ثلث امّا منافق وامّا ولدزانية واما حملته امّه على غير طهر
"जो मेरी औलाद का हक़ न पहचाने वो इन तीन में से है मुनाफ़िक़ या हरामी या हैज़ी बच्चा"
और फ़रमाया- انما سيت فاطمة لان الله تعالى حرمها وذريتها على النار
(इनका फातिमा नाम इसलिए हुआ की अल्लाह ने इनको और इनकी तमाम औलादों को आग पर हराम फार्मा दिया)
और फ़रमाया:- ان الله غير معذبک ولا ولدک اوکما قال صلى الله تعالى عليه وسلم

(ए फातिमा अल्लाह ना तुझे अज़ाब करेगा ना तेरी औलाद में से किसी को)
हाकिम ने इसे सहीह कहा हुज़ूर ने फ़रमाया- “मुझ से अल्लाह ने मेरी अहले बैत के हक़ में फ़रमाया की इनमे से जो तौहीद ओ रिसालत का इक़रार करने वाला हुआ उन्हें अज़ाब न फरमाए “

इस हदीस के तहत आलाहज़रत फरमाते हैं, "अल्लाह से उम्मीदे वासिक यही है की आख़िरत में उनको किसी गुनाह पर अज़ाब न दिया जायेगा”,

तिर्मिज़ी ने हज़रत जाबिर से रिवायत की फ़रमाया – “हम मुनाफ़िक़ को हज़रत अली के बुग्ज़ से पहचानते थे”

इमाम कस्तलानी ने मवाहिबुल लदुनिया में फ़रमाया
"अल्लाह ने हुज़ूर की तमाम अहले बैत की मोहब्बत फ़र्ज़ कर दी है"

फतावा रज़विया जिल्द: 22 सफह: 423 पर है
"सय्यिद सही-उन-नसब की ताज़ीम लाज़िम है, अगरचे उसके अमाल कैसे ही हों, उनके अमाल के सबब उनसे नफरत ना की जाये, सादाते किराम की इंतिहाए नसब हुज़ूर पर है इस निस्बत की फ़ज़ीलत की ताज़ीम (आम मुस्लमान को तो क्या) मुतक़्क़ी पर (भी) फ़र्ज़ है क्यूंकि ये इस (अहले बैत) की ताज़ीम नहीं हुज़ूर की ताज़ीम है"
अलमुस्तदरक ने अबू ज़र से रिवायत की फ़रमाया - "तुम में मेरी अहले बैत की मिसाल कश्ती नूह की तरह है, जो इसमें सवार हुआ वो निजात पायेगा, और जो पीछे रह गया हलाक़ हो गया"

मिश्कात में (दौरान खुत्बा फ़रमाया)

मैं तुम्हे अपने अहले बैत के मुताबिक़ अल्लाह से डराता हूँ, (यही अल्फ़ाज़ तीन बार कहे)

यानि मैं तुमको अपनी अहले बैत के मुतालिक अल्लाह से डराता हूँ, की उनकी **नाफरमानी, बेअदबी** भूल कर भी ना करना, वरना दीन खो बैठोगे,

मिरात शरह मिश्कात में है

“अल्लाह की मुहब्बत के लिए मुझ से मुहब्बत करो और मेरी मोहब्बत के लिए मेरी अहले बैत से मोहब्बत करो”

जामेउस सगीर में है –

“अपनी औलाद को तीन बातें सिखाओ, मेरी मोहब्बत, मेरी अहले बैत की मोहब्बत और तिलावते क़ुरआन"

हदीस मिश्कात में है –

“ए लोगो मैंने तुममे दो चीज़े छोड़ी है, जब तक तुम उनको थामे रहोगे गुमराह नहीं होंगे, एक क़ुरआन और दूसरी मेरी अहले बैत”

देहलमी ने फ़रमाया -

"उस ज़ालिम पर अल्लाह सख्त अज़ाब करेगा, जिसने मेरी औलाद को तकलीफ दी, या परेशान किया उन्हें नुकसान पहुंचाया"

अबू नईम ने उस्मान गनी से रिवायत की –

“दुनिया में जिस किसी ने मेरी अहले बैत से कोई नेक या अच्छा सुलूक या अहसान किया, और वो अहले बैत उसका बदला ना दे सके, तो क़ियामत के दिन मैं उसकी तरफ से पूरा बदला अता करूँगा"

तफ़्सीरे कबीर में है

खबरदार हो जाओ, जो शख्स अहले बैत की दुश्मनी पर मरा, वो क़ियामत के दिन इस हाल में आएगा, की उनकी दोनों आँखों के दरमिआन लिखा होगा, अल्लाह की रेहमत से नाउम्मीद

इमाम बहैकि ने रिवायत किया

कोई बंदा कामिल मुस्लमान नहीं हो सकता जब तक मैं उसे अपनी जान से ज़्यादा प्यारा ना हो जायूँ और मेरी औलाद अपनी जान से प्यारी ना हो जाये,

इसी तरह बहुत हदीसे हैं, और बुज़ुर्गाने दीन के अक़्वाल का खुलासा है -

- जो अहले बैत की मोहब्बत पर मरा शहादत की मौत मरा
- जो अहले बैत की मोहब्बत पर मरा कामिल ईमान के साथ मरा
- जो अहले बैत की मोहब्बत में फोत हुआ उसे ऐसी इज़्ज़त के साथ जन्नत में ले जाया जायेगा, जैसे दुल्हन दूल्हे के घर,
- जो अहले बैत की मोहब्बत पर मरा उसके लिए क़बर में जन्नत के दरवाज़े खोल दिए जाते हैं,
- जो अहले बैत से दुश्मनी रखे मुनाफ़िक़ है
- जो अहले बैत से दुश्मनी रखे हरामी की औलाद है
- उसका ख़ातिमा कुफ्र पर होने का खौफ है
- इनकी मोहब्बत ईमान की निशानी है
- इनकी मोहब्बत अल्लाह रसूल की मोहब्बत का जरिया है

इसिलए **आलाहज़रत** फरमाते है -

दो जहाँ में खादिम ए आले रसूल्लाह कर

हज़रते आले रसूले मुक़्तदा के वास्ते

हुब्बे अहले बैत दे आले मुहम्मद के लिए

कर शहीदे इश्क़े हम्ज़ा पेशवा के वास्ते

अब रहा सवाल का दूसरा पहलु की वहाबी देओबंदी के वहां सब बराबर हैं,

तो इसका जवाब बहुत आसान और समझ में जल्द आने वाला है की -

जिसके वहां **नबी** और **उम्मती** बराबर हों

जिसके वहां **नबी का इल्म** और **शैतान का इल्म** बराबर हो

जिसके वहां **मज़ार** और **मूर्ती** बराबर हो

जिसके वहां **नियाज़**, हराम के बराबर हो

जिसके वहां **वली** से मदद **शिर्क** के बराबर हो

जिसके वहां **दरगाह** की हाज़री **बुतपरस्ती** के बराबर हो

तो उसके नज़दीक सय्यिद और गैरे सय्यिद बराबर हो जाये तो क्या बड़ी बात

शिर्क ठहरे जिसमे ताज़िमे हबीब

उस बुरे मज़हब पे लानत कीजिये

والله تعالیٰ اعلم بالصواب والله یرجع الیہ ماب

ماشاء الله لاقوة الا بالله

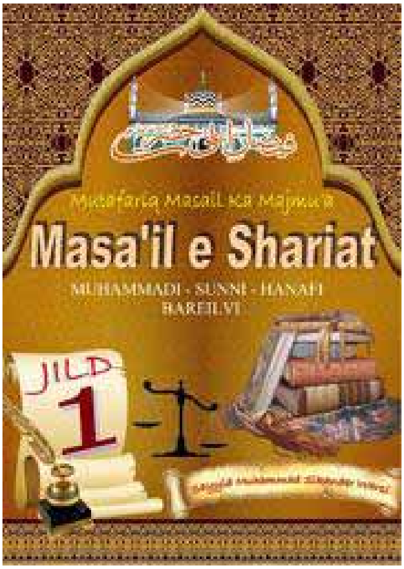
Mutafariq Masail ka Majmu'a
Masa'il e Shariat
MUHAMMADI - SUNNI - HANAFI
BAREILVI
JILD
1

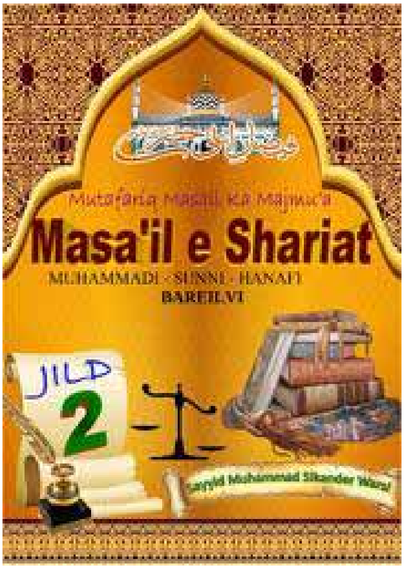
Mutafariq Masail ka Majmu'a
Masa'il e Shariat
MUHAMMADI - SUNNI - HANAFI
BAREILVI
JILD
2
Sayyid Muhammad Sikander Warsi